॥ ओ३म् ॥

कौन कहता है द्रौपदी के पांच पति थे?

लेखक :—

महात्मा अमर स्वामी जी महाराज

प्रकाशक
लाजपत राय आर्य
अमर स्वामी प्रकाशन विभाग
दयानन्द नगर, गाजियाबाद, उ०प्र० (भारत)

प्रकाशक :—

लाजपत राय आर्य
अमर स्वामी प्रकाशन विभाग

२०००] गाजियाबाद

मूल्य : छः रुपये
सजिल्द : सात रुपये

लेखक : महात्मा अमर स्वामी जी महाराज

मुद्रक : जनशक्ति मुद्रण यन्त्रालय, के-१७, नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२

मूल्य : छः रुपये (सजिल्द-सात रुपये)

सम्पादक : लाजपत राय आर्य

संस्करण : पांचवी वार, दिसम्वर सन् १६७८ ई०

वितरक : १. अमर स्वामी प्रकाशन विभाग, गाजियावाद (उ० प्र०)

२. मुनीश्वरानन्द प्रकाशन मन्दिर, हिसार

३. गोविन्दराम हासानन्द—नई सड़क, दिल्ली-६

४. पाणिनी कन्या महाविद्यालय, पो० तुलसीपुर-वजरड़ीहा, वाराणसी-५

५. हिन्दी पाकेट बुक्स ई, ५।२० कृष्णनगर, दिल्ली-३१

६. स्वामी स्वरूपानन्द जी, आर्य समाज गान्धीनगर, दिल्ली-३२

सत्यान्वेषण

समग्र भारत में सर्व साधारण के मनों में यह भ्रान्ति घर कर गई है कि द्रौपदी के पांच पति थे।

यह प्रश्न पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज के सम्मुख अनेकों बार आया। स्वामी जी महाराज का अध्ययन एवं अनुशीलन अथाह हैं। स्वामी जी महाराज के पास प्रमाणों का भंडार है। एक बार तो स्वामी जी महाराज को इसी विषय पर वाद भी करना पड़ा। इस प्रकार से यह विषय काफी दिलचस्प होने के कारण अनेकों व्यक्ति शंकायें उत्पन्न किया करते थे। एवं व्यक्तिगत रूप से बुलाकर इसी विषय पर व्याख्यान कराते थे। एक बार तो आर्य समाज थापर नगर (मेरठ) ने बड़े आग्रह के साथ स्वामी जी महाराज को बुलाकर व्याख्यान कराया था।

इसके साथ एक विकट समस्या और भी थी कि, अगर द्रोपदी का पति एक था तो वह कौन था ? अर्जुन या युधिष्ठिर ?

अन्त में इस विषय पर स्वामी जी महाराज ने एक ट्रैक्ट लिखा जिसको श्री देवराज जी गुप्त प्रधानाचार्य दयानन्द कालिज हिसार एवं डी० ए० वी० हायर सैकेण्डरी स्कूल के आचार्य श्री पं० जगन्नाथ जी के प्राप्त धन से सन १९६९ ई० में प्रकाशित कराया गया था। उसके बाद भी वह बहुत बार छपा। अब उस ट्रैक्ट को पुस्तक रूप में पांचवीं बार प्रकाशित कर रहे हैं, आशा है स्वाध्यायशील सज्जनों के लिए हितकर सिद्ध होगी ! इसके प्रकाशन में जो सहयोग मुझें श्री प्रौ० रामविचार जी ने मुनीश्वरानन्द प्रकाशन की ओर से दिया है। उसके लिए में उनका हृदय से आभारी हूं।

:—निवेदक
"लाजपत राय आर्य"

दो शब्द

पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज देश एवं समाज के के लिए एक निधि स्वरूप हैं, मेरा सदा से ही उनके प्रति निष्ठा एवं प्रेम रहा है, वर्तमान समय में समाज के अन्दर उनसे पुराना कोई उपदेशक नहीं है और ऐसा सिद्धांतों का मर्मज्ञ, त्यागी, तपस्वी सन्यासी मिलना दुर्लभ है।

स्वामीजी महाराज ने अनेकों सैद्धांतिक अनुसंधानात्मक पुस्तकें लिखी हैं उन्ही में से यह भी एक है। यह विषय बड़ा ही गम्भीर एवं विवादास्पद रहा है। मेरी इच्छा इस पुस्तक के प्रकाशित होने की हुई तो मैंने स्वामी जी से और उनके विद्यार्थी श्री लाजपत राय जी से इस सम्बन्ध में बात की।

मैंने कहा स्वामीजी महाराज यह पुस्तक बहुत आवश्यक है। इस पुस्तक को हम स्वामी मुनीश्वरानन्द (पूर्व आचार्य ज्ञानचन्द्र) प्रकाशन मन्दिर के कोष में से अगर कुछ सहायता दे दें तो क्या यह पुस्तक छप सकती है वे सहर्ष तैयार हो गए और यह पुस्तक प्रकाशित हो गयी। इस पुस्तक के बिकने के पश्चात जो धन आवेगा, उससे भविष्य में मुनीश्वरानन्द प्रकाशन इसी तरह के खोजपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित करवा कर स्वाध्यायशीलों की भेंट कर सकेगा, जिसके लिए आप सभी का सहयोग अत्यावश्यकहै।
किमधिकम्,

विदुषामनुचर :
रामविचार एम० ए०
प्राध्यापक दयानन्द कालिज, हिसार (हरियाणा)

लेखक का निवेदन

यह पुस्तक पहिले कई वार छप चुकी है इसका नाम था "क्या द्रौपदी के पांच पति थे ?" यह पुस्तक दूर-दूर तक पहुंची बड़े-वड़े विद्वानों ने इसकी बहुत प्रशंसा की पुस्तक शीघ्र हीं समाप्त हो गई और मांग बहुत आती रही।

कई वड़े-बड़े विद्वानों ने लोगों की प्रचलित भ्रान्तियुक्त धारणाएं और शंकाएं लिख लिखकर भेजी श्री पं० जगदेवसिंह जी शास्त्री सिद्धान्ती भूतपूर्व संसद सदस्य ने बहुत ही सहोयग दिया उन्होंने अनेकानेक शंकाएं लोगों की भेजी और उनका उत्तर लिखने की मुझको प्रेरणा की, मैं उनका वहुत आभार मानता हूं। उनकी प्रेरणा से सब शंकाओं के समाधान मैंने लिखे। लोगों की भ्रान्तियुक्त धारणाओं को दूर करने के लिए वहुत कुछ लिखना पड़ा, इससे पुस्तक का बढ़ जाना स्वाभाविक था सो यह वढ़कर पहिले से आठ गुणी कें लगभग हो गई।

अव इस पुस्तक का पाचवां संस्करण प्रकाशित हो रहा है मेरे प्रिय शिष्य लाजपतराय जी आर्य ने इसको लिखने में मेरी बह्त बड़ी सहायता की, उनके बड़े परिश्रम के वदले मैं उनको हार्दिक धन्यवाद ही दे सकता हूं और मुझ फकीर के पास क्या है। प्रिय लाजपतराय जी ने ही इस दूसरे संस्करण के लिये इसका नाम भी वदल कर यह बना दिया—

"कौन कहता है द्रौपदी के पांच पति थे ?"

प्रथम संस्करण जब छपा था तब इसके चौथे भाग कें समान ही था इसके साथ ही कागज भी सस्ता था छपाई आदि सभी

कुछ सस्ती थी अब जहां पुस्तक आठ गुणी बढ़ी वहां कागज, छपाई आदि भी पहिले की अपेक्षा सभी का मूल्य चार गुणा हो गया, तो प्रिय लाजपत राय जी ने बढ़िया कागज़ और छपाई के साथ सुन्दर पुस्तक बनाकर भी मूल्य उतना नहीं बढ़ाया जितना बढ़ सकता था।

इस पुस्तक पर जो व्यय हुआ उससे मेरा कुछ सम्बन्ध नहीं इसकी आय से भी मेरा कुछ सम्बन्ध नहीं है।

स्वाध्याय शील और विद्वान्त प्राध्यापक श्री पं० रामविचार जी एम ए० ने श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी सरस्वती (प्रि० ज्ञान-चन्द जी एम० ए०) स्मारक न्यास से कुछ आर्थिक सहायता देकर लाजपतराय जी का भार कुछ हलका कर दिया, उनका मैं भी हार्दिक धन्यवाद करता हूं।

इस पुस्तक के पुनर्लेखन में मुझको भी और लाजपतराय जी को भी अपने आर्य कहलाने वाले जनों के द्वारा इतनी कठि-नाइयां उपस्थित हुई कि—उनका न कहना ही भला—उन कठि-नाइयों के कारण पुस्तक के प्रकाशन में लगभग छः मास का विलम्ब हो गया जब कि वे लोग हमारे बिलकुल निकट रहते हैं और अपने को आर्य ही नहीं बल्कि भिक्षु, महात्मा, त्यागी और तपस्वी न जाने किन किन नामों से अलंकृत करते हैं फिर भी हम साधु हैं उनका भी कल्याण ही चाहते है। पाठक इस पुस्तक को पढ़ें और सत्य को ग्रहण करें तो मेरा परिश्रम सफल हो।

वैदिक धर्म का प्रचारक—

"अमर स्वामी परिव्राजक"

अमर सूत्र

१. पुराने आर्य नेताओं ने अपने घरों को उजाड़ कर आर्य समाज को बनाया था, नये आर्य समाजी नेता, आर्य समाज को उजाड़ कर अपने घरों को बना रहे हैं।

२. पौराणिकों में पुरोहित अपने यज्ञमान को ठगता है, आर्य समाजी यज्ञमान अपने पुरोहित को ठगता है।

३. पौराणिकों में ज्ञानी अज्ञानियों को अपनी आज्ञा में चलाते हैं। आर्य समाजी अज्ञानी-ज्ञानियों को अपनी आज्ञा में चलाते हैं।

४. पौराणिकों में अपूज्यों की पूजा होती है, आर्य समाज में पूज्यों का अनादर होता है।

५. पौराणिकों में संन्यासी सबसे बड़ा माना जाता है, आर्य समाज में संन्यासी का कोई महत्व नहीं है।

६. पौराणिकों में संन्यासी जीवन निर्वाह के लिए निश्चिन्त होता है, आर्य समाजी संन्यासी को जीवन निर्वाह की चिन्ता तो निरन्तर रहती ही है, मरने के लिए भी चिन्ता रहती है कि, कहाँ मरूँ ?

७. आर्य समाज में एक ओर यज्ञ और योग के नाम पर पाखण्ड प्रबल वेग से बढ़ रहा है, दूसरी ओर राजनीति का राक्षस आर्य समाज को जिन्दा ही खा जाना चाहता है।

८. पहले आर्य समाजों के भवन कच्चे होते थे, मगर आर्य समाजी पक्के होते थे। अब आर्य समाजों के भवन पक्के होते हैं परन्तु आर्य समाजी कच्चे मिलते है।

अमर स्वामी परिव्राजक

९. आर्य समाज को क्षति पहुंचाने वाला आर्य समाजी ही है।

"प्रिन्सिपल हंसस्वरूप जी चण्डीगढ़"

१०. आर्य समाज वह अस्पताल है, जिसमें मरीज आदमी भर्ती होते हैं, तथा फिर इसमें से पारसमणि बनकर बिलकुल स्वस्थ निकलते हैं।

११. आर्य समाजी अगर खुश हो जावे तो धन्यवाद कर देता है। अगर नाराज हो जावे तो जीना भी हराम कर देता है।

"लाजपतराय आर्य"

१२. आर्य समाजी वही है, जो न खुद चैन से बैठे और न किसी को बैठने दे।

"स्व० स्वामी समर्पणानन्द जी महाराज"

१३. आर्य समाजी वही है, जो खुद ही अपनी बात को न माने तथा दूसरों से मनवाना चाहे।

"स्वामी मुनीश्वरानन्द जी"

१४. दुनिया के बिगड़े हुओं का सुधार आर्य समाज करता है। परन्तु बिगड़े हुए आर्य समाजी का सुधार कोई नहीं कर सकता।

"ठा० विक्रम सिंह जी एम० ए०"

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग द्वारा प्राप्त साहित्य

क्रम सं०	पुस्तक का नाम	लेखक	मूल्य	
			रु०	पैसे
१	क्या रावण वध विजय दशमी को हुआ था ? (रामायण दर्पण)	अमर स्वामी जी परिव्राजक	३	००
२	अमर गीतांञ्जली प्रथम भाग	सकंलन कर्त्ता-सेठ धनप्रकाश जी	३	००
३	अमर गीतांञ्जली द्वितीय भाग	,,	३	००
४	अमर गीतांञ्जली तृतीय भाग	श्री रविकान्त जी शास्त्री एम. ए.	३	००
५	अमर गीताञ्जली चतुर्थ भाग	,, लाजपतराय जी आर्य	२	००
६	सन्ध्या के दो मन्त्रों की व्याख्या	अमर स्वामी जी परिव्राजक	—	५०
७	गीता और महर्षि दयानन्द	,, ,, ,,	—	५०
८	धर्म बलीदान (शुक्रराज शास्त्री को नेपाल में फांसी) सजिल्द	,, ,, ,,	२	५०
९	मूर्ति पूजा और शंकराचार्य (परापूजा)	,, ,, ,,	१	००
१०	मूर्ति पूजा और शंकराचार्य(सजिल्द)	,, ,, ,,	१	५०

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग द्वारा प्राप्त साहित्य

क्र० सं०	पुस्तक का नाम	लेखक	मूल्य	
			रु०	पैसे
११	अमर स्वामी जी का अभिनन्दन ग्रन्थ	सम्पादक-ठा० विक्रम सिंह एम. ए.	१२	००
१२	,, ,, ,, (सजिल्द)	,, ,, ,,	१५	००
१३	आर्य समाज के प्रवेश पत्र (१ कापी-में १०० पत्र)	,, लाजपत राय आर्य	३	००
१४	स्त्री आर्य समाजों ,, ,, ,,	,, ,, ,,	३	००
१५	कौन कहता है द्रौपदी के पांच पति थे ?	अमर स्वामी परिव्राजक	६	००
१६	,, ,, ,, (सजिल्द)	,, ,, ,,	७	००
१७	निर्णय के तट पर (प्रथम भाग)	,, ,, ,,	३०	००
१८	कुरान परिचय ३ भाग सम्पूर्ण	पं. देव प्रकाश	२१	००
१९	कयामत, जन्नत, दोजख	,, ,,	३	००
२०	इन्जीलों में परस्पर विरोधी कल्पनाएं	,, ,,	३	५०

२१	भारतीत शिक्षा	डा० ओम शिवराज	२०	००
२२	अनमोल हीरा "ब्रह्मचर्य"	विश्वपाल जयन्त	८	००
२३	संगीत महोदधि	स्वामी स्वरूपा नन्द जी	१०	००
२४	दम्भ दमन	श्री पं बिहारी लाल शास्त्री	—	६०
२५	कुरान मजीद (हिन्दी, उर्दु, अरबी)	मौ. फारुख	६०	००
२६	„ „ („ अंग्रजी)	मौ. पिंकथाल	६०	००
२७	सत्यार्थ प्रकाश सक्षिप्त सजिल्द	सार्वदेशिक सन्यासी मंड़ल द्वारा प्रकाशित	२	५०
२८	धर्म	प्रि. दीवान चन्द	५	००
२९	पचांभिनन्दन ग्रन्थ	—	२	००
३०	प्रश्नोत्तरी (शंकराचार्य कृत)	अनुवादक-अमर स्वामी परिव्राजक	१	५०
३१	यह नैय्या कैसे पार लगे	प्रो. राम विचार एम. ए.	—	५०
३२	आर्य समाज का कायाकल्प कैसे हो ?	„ „ „	—	७५
३३	प्रि० आचार्य ज्ञानचन्द अभिनन्दन ग्रन्थ	सम्पादक— „	१५	००
३४	गोपथ ब्राह्मण	पं. क्षेमकरण दास त्रिवेदी	४०	००
३५	अथर्व वेद भाष्य (१-४)	„ „ „	२६	००

नोट—विशेष जानकारी के लिए प्रकाशन से बृहद् सूची पत्र प्राप्त करें ।

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग की
प्रकाश्य मान ग्रन्थों की सूची

महात्मा अमर स्वामी जी महाराज कृत—

१. अमर प्रमाण सागर
२. जिवित पितर
३. पशुवली अधर्म है
४. रामायण दर्पण
५. निर्णय के तट पर (दूसरा भाग)
६. गीता अमर विवेक भाष्य
७. ईसा मसीह को उसके चेलों ने ही मरवाया ?
८. भारतीय करण
९. वेद में विश्व शान्ती के उपाय
१०. गीता और अवतार वाद
११. प्रस्थान त्रयी
१२. अमर गुलदस्ता
१३. प्रश्नोत्तरी (आद्य श्री शंकराचार्य जी महाराज कृत)

लाजपत राय आर्य कृत—

१. धर्म और रोटी
२. धूम्रपान से छुटकारा! क्यों! !कैसे?
३. क्रांन्ति! परिवर्तन! ! इन्कलाब!! !
४. हमारा क्या कसूर था ?
५. आखिर ऐसा क्यों ?
६. धर्म जाये भाड़ में
७. कलम का गुनाह
८. बुभुक्षिता किम् न करोति पापम् ।

ओ३म्

अमर स्वामी प्रकाशन के उद्देश्य और कार्य

(१) वेद और वेद सम्बन्धी साहित्य को घर-घर में पहुंचाना उसका प्रचार तथा प्रसार करना।

(२) महर्षि दयानन्द जी के बताये सिद्धांतों का मण्डन तथा उनका लिखित और मौखिक प्रचार करना।

(३) धर्माचार्य श्री अमर स्वामी जी महाराज द्वारा लिखे सभी ग्रन्थों को प्रकाशित करना।

(४) भारत वर्ष के वास्तविक इतिहास की खोज करना तथा उसको छपवाकर सत्य इतिहास का दिग्दर्शन कराना।

(५) भारतीय संस्कृति और सभ्यता से मनुष्य मात्र को परिचित कराना।

(६) पाखण्डों, पाखण्ड ग्रन्थों, गपोड़ों और आडम्बरों का युक्ति युक्त प्रभाव पूर्वक खण्ड न करके भोले भाले लोगों को भ्रमजाल से निकालना।

(७) जो उत्तमोत्तम ग्रन्थ अप्रकाशित हैं अथवा समाप्त हो जाने से अप्राप्त हैं उनको प्रकाशित करना।

(८) एक मासिक पत्र प्रकाशित करना।

(९) नास्तिकता का मूलोच्छेदन तथा, आस्तिकता का विस्तार करना।

(१०) देश में बढ़ती हुई कुरीतियों को हटाना तथा मानव मात्र को सन्मार्ग दिखाना।

नोट—यदि धनी और दानी सज्जन समझें कि उपर्लिखित उद्देश्यों तथा कार्यों में धन देना पुण्य कार्य है तो अवश्य धन दें। धन की बहुत आवश्यकता है।

वैदिक धर्म का प्रचारक—

"अमर स्वामी परिव्राजक"

हर्ष समाचार

हमें आर्य जगत को यह सूचित करते हुए हर्ष हो रहा है कि, महात्मा अमर स्वामी जी महाराजकृत निर्णय के तट पर 'शास्त्रार्थ संग्रह" जिसमें २८८ पृष्ठ २०×३० के ८वें साइज पर सम्पूर्ण कपड़े की जिल्द एवं उत्तम प्रिंटिंग के साथ टाईटिल सहित प्राप्त होगा, यह ग्रन्थ अनेकों विद्वानों की सम्मतियों सहित सुन्दर कागज एवं आकर्षक प्रिन्टिग के साथ अमर स्वामी प्रकाशन विभाग के अन्तर्गत दिसम्बर मास १९७८ में प्रकाशित होने के लिए दिया जा रहा है। जो जनवरी में प्रकाशित हो जावेगा।

इस विशाल ग्रन्थ के अन्दर अनेक मत मतान्तरों के साथ जो शास्त्रार्थ अमर स्वामी जी महाराज ने किए हैं, उनका संकलन श्री लाजपत राय आर्य जी ने बड़ी मेहनत एवं कठोर तपस्या से किया है।

हर विषय पर जितनी भी भ्रांतियां व शंकायें हैं उन सभी का अद्भुत समाधान है, यह आर्यसमाज का एक प्रमुख ग्रन्थ होगा, एवं आर्य जगत के अन्दर इसका मुख्य स्थान होगा।

आप शीघ्र ही तीस रुपया भेजकर अपनी प्रति बुक करालें।

"प्रबन्धक"
अमर स्वामी प्रकाशन विभाग

विषय-सूची

क्रम	विषय	पृष्ठ
१.	बकासुर महा राक्षस का वध	५८
२	स्वयम्वर की सूचना	६१
३.	ब्राह्मण द्वारा कुन्ती को पाडण्वों सहित स्वयम्वर में जाने का आग्रह	६३
४.	आगन्तुक ब्राह्मण द्वारा स्वयम्वर की तिथी बताना	६६
५.	कुन्ती का पाण्डवों सहित पांचाल देश को प्रस्थान	६९
६.	रास्ते में ब्राह्मणों की टोली से बातचीत	७०
७.	पाण्डवों का पांचाल देश में प्रवेश	७२
८.	पाण्डवों का कुम्हार के घर में निवास	७५
९.	कुन्ती द्वारा अपने पुत्रों को प्राप्त भिक्षा को एक साथ मिलकर खाने के लिए कहना	८५
१०.	ब्रह्मा जी की वंशावली	१०७
११.	अर्जुन का तीसरा विवाह	१२५
१२.	अर्जुन को वनवास १२ वर्ष का या १३ माह का	१२६
१३.	अर्जुन द्वारा लक्ष्य वेध	१३०
१४.	महाराजा द्रुपद द्वारा स्वयम्बर की घोषणा	१३३
१५.	द्रौपदी का विवाह युधिष्ठिर के साथ	१४३
१६.	महर्षि धोम्य द्वारा विवाह संस्कार	१४४
१७.	राजा द्रुपद द्वारा विवाह में दिया गया धन	१४५
१८.	पाण्डवों के पुत्रों एवं पत्नियों की तालिका	१५४
१९.	महाराजा पुरु वंश के प्रमुख वीर राजाओं की नामावली	१५६
२०.	धर्म ग्रन्थों में मिलावटो का कारण एवं उनका परिणाम	१६०
२१.	(परिशिष्ट भाग) कौन कहता है द्रौपदी के पांच पति थे ?	१६४

क्रम	विषय	पृष्ठ
२२.	(ऐतिहासिक विवेचन) आर्य मर्यादा २६ अगस्त सन् १६७१ ई० "कौन कहता है द्रौपदी अर्जुन की पत्नी थी" ?	१६५
२३.	युधिष्ठिर का द्रौपदी के साथ विवाह	१७५
२४.	अर्जुन ने भी युधिष्ठिर जी से क्षमा मांगी	१८६
२५.	अगर द्रौपदी को अर्जुन की या पांचों पाण्डवों की पत्नी मान लिया जाय तो ?	१९८
२६.	अमर वृत्त (मासिक) समाचार पत्र की सूचना	२००

पुस्तक में आए चित्रों की सूची

क्रम	चित्रों के विषय	पृष्ठ
१.	धृष्टद्युम्न द्वारा स्वयम्वर की घोषणा	२१
२.	द्रौपदी को गाजों बाजों के साथ विवाह कर ले जाते हुए	२२
३.	भीमसेन द्वारा राक्षस बकासुर का वध	५६
४.	ब्राह्मण द्वारा पाण्डवों को स्वयम्वर की सूचना देना	६०
५.	पाण्डवों की रास्ते में ब्राह्मणों की टोली से बातचीत	६७
६.	कुन्ती द्वारा ब्राह्मण परिवार को सान्त्वना देना	६८
७.	पाण्डवों का पाञ्चाल देश में प्रवेश	७३
८.	पाण्डवों का कुम्हार के घर पर निवास	७४
६.	अर्जुन द्वारा लक्ष्यवेध	१३०
१०.	युधिष्ठिर द्वारा द्रौपदी को दाव पर लगाना	१५२
११.	क्या द्रौपदी अर्जुन की पत्नी थी ?	१६५
१२.	द्रौपदी द्वारा भीमसेन को अपना कष्ट बताना	१६७
१३.	भीमसेन द्वारा कीचक वध	१६८
१४.	महाराजा द्रुपद द्वारा विवाह में दिया गया धन	१७३
१५.	युधिष्ठिर का द्रोपदी के साथ विवाह	१७४

स्व० स्वामी मुनीश्वरानन्द जी महाराज
(पूर्व आचार्य प्रि० ज्ञानचन्द जी)

परिचय—महात्मा श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी सरस्वती (प्रि० ज्ञानचन्द जी एम० ए०) आप डी० ए० वी० कालेज जालन्धर के प्रोफेसर रहे, डी० ए० वी० कालेज रावलपिंडी तथा डी० ए० वी० कालेज जालन्धर के प्रिंसिपल रहे। दयानन्द कालिज हिसार के संस्थापक और प्रिंसिपल तथा दयानन्द ब्राह्म महा विद्यालय (हिसार) के संस्थापक तथा आचार्य रहे, आप तपस्वी, त्यागी और धार्मिक सज्जन थ।

"अमर स्वामी परिव्राजक"

प्रस्तुत पुस्तक के लेखक :—

"महात्मा अमर स्वामी जी महाराज"

रविकान्त शास्त्री
एम० ए०, बी एड०
राजकीय इन्टर कालेज, शाहजहांपुर
(उ० प्र०)

प्रकाशकः—
लाजपतराय आर्य

'गोविन्द सहाय गुप्त'
९६८, लक्ष्मीबाई नगर, नई दिल्ली-२४

लोक में यह प्रसिद्ध है कि--द्रौपदी के पांच पति थे, प्रसिद्ध होने मात्र से वा किसी ग्रन्थ में लिखे हुए होने मात्र से भी कोई बात सत्य ही मान ली जाय, यह आवश्यक नहीं है। ऐतिहासिक वा सैद्धान्तिक अनुसन्धान करने वाले लोगों को गम्भीरता से प्रत्येक बात की गहराई तक पहुँचकर ही किसी बात के मानने वा न मानने की घोषणा करनी चाहिये।

लोक में बहुत सी बातें ऐसी प्रसिद्ध हैं और प्रचलित हैं और ग्रन्थों में भी लिखी हैं, जो सर्वथा बुद्धि के विरुद्ध हैं।

—यथा

ब्रह्मा के चार सिर थे, विष्णु की चार भुजाएं थीं

दुर्गा की भुजाएं आठ थीं, रावण के मुख दस थे, और भुजाएँ बीस थीं।

गणेश का धड़ मनुष्य का था और सिर हाथी का, हयग्रीव का धड़ मनुष्य का था और शिर घोड़े का। नृसिंह का धड़ मनुष्य का और मुख सिंह का था।

नित्य उदय होकर-दिन को बनाने वाले दिनकर दिवाकर भुवन भास्कर सूर्य की पुत्री तपती महाराजा प्रतीप को विवाही थी। और हिमालय पहाड़ के गंगोत्तरी भाग से निकलकर बहती हुई समुद्र में गिरने वाली भागीरथी गंगा का विवाह भीष्म (देवव्रत) के पिता शान्तनु से हुआ था। और देवव्रत भीष्म जी की वही माता थी।

भीमसेन को दुर्योधन ने विष युक्त मिठाइयाँ खिलादीं थी। भीमसेन के बेहोश हो जाने पर उनको गंगा में बहा दिया गया वह बहता २ नाग लोक में पहुँचा और कई

नाग उसके नीचे दब गये। नागों ने उसको डसा तो उसका विष उतर गया और वह अपने काटने वाले नागों—साँपों को कुचल २ कर मारने लगा। सांप रोते हुये अपने राजा वासुकि के पास गये कि—हम को बचाइये वासुकि और आर्यक दोनों वहां आये जहां भीमसेन सांपों को कुचल रहे थे। आर्यक पृथा—कुन्ती के पिता सूरसेन का नाना था उसने भीमसेन को पहचान लिया कि यह तो मेरे दौहित्र (धेवते) का दौहित्र (धेवता) है। सांपों के साथ मनुष्यों का यौन सम्बन्ध महाभारत में लिखा निकल आया प्रत्यक्ष देखना चाहें तो गीता प्रेस गोरखपुर महाभारत में देखलें। भीमसेन को सांप काट रहे हैं और भीमसेन सांपों को मार रहे हैं चित्र बना हुआ है।

वासुकि—सांप जो सांपों का राजा था उसकी बहिन जरत्कारू, ऋषि को विवाही गई उससे आस्तीक नाम पुत्र उत्पन्न हुआ जिसने महाराजा जनमेजय के सर्पसत्र

यज्ञ में सांपों को यज्ञ की अग्नि में जलने से बचाया।

पवन पुत्र हनुमान लम्बी पुंछ वाला बन्दर था और वेदों तथा व्याकरण का प्रकाण्ड पण्डित था। (इस पर मेरी बनाई पुस्तक-हनुमान आदि बानर बन्दर थे या मनुष्य ! देखिये) आदि सैकडो सहस्त्रों गप्पें पुराणों में लिखी पड़ी हैं कथा वाचक लोग निःशक होकर उनको सुनाते और श्रोतागण सत्यंवचन महाराज, कहकर अपना धन कथक्कड़ों को देते हैं।

विद्वानों और बुद्धिमानों का कर्त्तव्य है कि वे इतिहासों और सिद्धान्तों की खोज करके सत्य और असत्य को जानकर भोले भाले लोगों के भ्रम का भन्जन करें।

द्रौपदी राजा द्रुपद की कन्या थी• उसका विवाह-युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव इन पांचों पाण्डु पुत्रों (पाण्डवों) के साथ हुआ इसलिये

धृष्टद्युम्न द्वारा स्वयम्वर की घोषणा
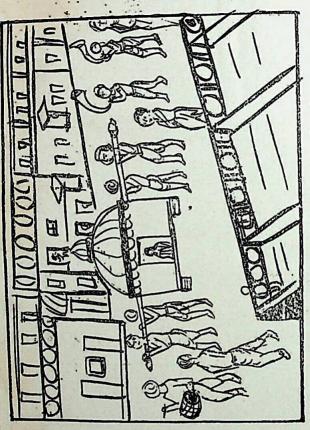
द्रौपदी को गाजों-बाजों के साथ विवाह कर ले जाते हुए

द्रौपदी आज तक "पञ्चभर्तारी,, कहलाती है, यह लोक प्रसिद्ध है पांचों पाण्डवों के साथ उस एक कन्या का विवाह क्यों हुआ? इसका मूल इस प्रकार बताया गया है :—

द्रुपद की सभा में द्रौपदी के स्वयम्बर के लिये जो मण्डप बनाया गया था उसमें एक घूमता हुआ चक्रयन्त्र लगाया गया और उसके ऊपर एक बनावटी मछली लगाई गई थी। द्रौपदी के भाई धृष्टद्युम्न ने राजों और राजकुमारों की भीड़ में यह घोषणा की कि इस चक्र में पांच बाण मार कर इस लक्ष्य को जो ऊपर लगाया गया है जो व्यक्ति गिरा देगा उसको द्रौपदी दे दी जायेगी। जैसा कि पृष्ठ २१ के चित्र में दिया गया है।

बहुत राजों और राजकुमारों ने उस लक्ष्य को भेदने का यत्न किया पर वह सफल न हुये तब अर्जुन ने उसी प्रकार से लक्ष्य भेदकर गिरा दिया। राजा द्रुपद ने द्रौपदी

अर्जुन को दे दीं भीमसेन और अर्जुन द्रौपदी को साथ लेकर कुम्हार के उस घर में पहुँचे जिसमें माता कुन्ती थी। दोनों ने कहा कि माता जी! हम आज एक बहुत अच्छी भिक्षा लाए हैं। पृष्ठ २२ में द्रौपदी को गाजों बाजों क साथ विवाह कर ले जाते हुए दिखाया गया है, माता कुन्ती ने द्रौपदी को बिना देखे यह कह दिया कि-तुम सब मिलकर भोगो अर्थात इसे खालो।

ध्यान रहे कि—वारणावत में दुर्योधन ने पाण्डवों को भस्म करने के लिये जो "जतुग्रह,, पीपल आदि की लाख का भवन बनवाया था और उसमें रहने के लिये पांचों पाण्डवों और माता कुन्ती को भेज दिया गया था, उसमें दुर्योधन के भेजे हुए पुरोचन के आग लगाने से पहिले भीमसेन ने ही आग लगा दी और माता कुन्ती के साथ पांचों पाण्डव सुरंग के मार्ग से बचकर निकल आये थे। यत्र तत्र विचरण करते, भिक्षा मांग कर खाते थे द्रौपदी का स्वयंबर सुनकर एकचक्रा नगरी से चलकर

पांचाल देश में द्रुपद के नगर में एक कुम्भकार-कुम्हार के घर में ठहरे थे। पाण्डव द्रौपदी के स्वयंवर में चले गये थे और माता कुन्ती यहीं कुम्हार के घर में थीं लौटकर उन्होंने माता से भिक्षा की बात कही और माता ने बिना देखे भाले और बिना विचारे रोटी पूरी पक्वान्न समझकर कह दिया कि-कुन्ती पांचों मिलकर खालो। पीछे द्रौपदी को देखा तो लिखा है कि-कुन्ती बहुत दुःखी हुई और घबराई हुई अपने ज्येष्ठ पुत्र युधिष्ठिर के पास जाकर कहने लगी कि पुत्र !

इयंतु कन्या द्रुपदस्य राज्ञः,
तवानुजाभ्यां मयि संनिविष्ठा।
यथोचितं पुत्र मयापि चोक्तं,
समेत्य भुङ्क्तेति नृप प्रमादात् ॥४॥
मया कथं नानृतमुक्तमद्य,
भवेत् कुरूणामृषभब्रवीहि।

पाञ्चालराजस्य सुतामधर्मो,

न चोपवर्तेच्च न विभ्रमेच्च ॥५॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १६० श्लोक ४, ५,

यह राजा द्रुपद की पुत्री द्रौपदी है तुम्हारे दो छोटे भाइयों भीमसेन और अर्जुन ने मुझको कहा कि-हम ला लाये हैं, मैंने भी बिना देखे कह दिया कि-तुम मिलकर इसको खालो।

हे कुरुओं में श्रेष्ठ युधिष्ठर। यह बताओ कि-अब क्या किया जाय जिससे मेरी बात झूंठी न हो और द्रौपदी को भी पाप न लगे।

"सएवमुक्तो मति मान नृवीरो,

मात्रा मुहूर्तं तु विचिन्त्य राजा ॥६॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १६० श्लोक ॥६॥

बुद्धिमान युधिष्ठर जी ने कुछ समय तक मन में इस पर विचार किया। फिर लिखा है कि—

तेषांतु द्रौपदी दृष्टवा सर्वेषाममितोजसाम।
सम्प्रमथ्येन्द्रियग्राम प्रादुरासीन्मनोभवः ॥१३॥
तेषामाकार भावज्ञः कुन्ती पुत्रो युधिष्ठरः ॥१५॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १६० श्लोक १३, १५,

द्रौपदी पर दृष्टि पड़ते ही उन महान तेज वाले सभी पाण्डवों की इन्द्रियों को मथ कर कामदेव उत्पन्न हो गया अर्थात सभी उस सुन्दरी को देखकर उसकी कामना करने लगे।

उनके मनोभाव को जानने वाले युधिष्ठर उनकी आकृति देख और उनके भावों को समझकर बोले—

अब्रवीत सहितान् भ्रातृन् मिथोभेदभयान्नृपः ।
सर्वेषां द्रौपदी-भार्या भविष्यतिहि नः सुभा ॥१६॥
महाभारत आदि पर्व अध्याय १९० श्लोक १६,

हम भाईयों में द्रौपदी के कारण फूट न पड़ जाये इस भय से युधिष्ठिर जी ने अपने सभी भाईयों से कहा—कि यह द्रौपदी हम सव की पत्नी होगी। फिर युधिष्ठिर जी ने राजा द्रुपद को भी कहा कि—द्रौपदी हम सभी भाइयों की पत्नी बनेगी। मेरी माता ने पहले हम सबको यही आज्ञा दे रक्खी है।

हम लोगों में यह निश्चिय हो चुका है कि इस रत्न को हम सब साथ-साथ ही भोगेंगे हम इस अपने निश्चय को तोड़ना नहीं चाहते हैं।

इससे यह द्रौपदी प्रज्वलित अग्नि के सम्मुख हम सब का पाणिग्रहण करें। द्रुपद ने कहा—

एकस्य बहुवो विहिता महिष्यः कुरुनन्दन।

नैकस्या बहवः पुंसः श्रूयन्ते पतयः क्वचित्॥२७॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४, श्लोक २७,

लोकवेद विरुद्ध त्वं नाधर्मं धर्मवच्छुचिः।

कर्तुमर्हसि कौन्तेय, कस्मात् ते बुद्धिरीदृशी॥२८॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक २८,

हे राजन ! एक राजा की कई रानियां या एक पुरुष की कई पत्नियां तो होती हैं पर एक स्त्री के बहुत से पति हों ऐसा तो कहीं नहीं सुना गया है।

हे कौन्तेय ! यह लोक विरुद्ध और वेद विरुद्ध, कार्य आपको नहीं करना चाहिए। आप तो शुद्ध पवित्र और धर्म के जानने वाले हैं आपकी बुद्धि ऐसी क्यों हो गई है ?

सूक्ष्मो धर्मोमहाराज नास्य विद्मो वयं गतिम् ।
पूर्वेषामानुपूर्व्येण यातं वर्त्मानुयामहे ॥२६॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक २६,

युधिष्ठिर जी ने कहा कि धर्म का स्वरूप बहुत ही सूक्ष्म है हम उसकी गति को नहीं जानते हैं। पूर्व काल में हमारे पूर्वज जिस मार्ग पर चले थे हम उसी मार्ग का अनुसरण करेंगे।

न मे वागनृतं प्राह नाधर्मे धीयते मतिः ।
एवं चैव वदत्यम्बा मम चैतन्मनोगतम् ॥३०॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक ३०,

मेरी वाणी कभी झूठ नहीं बोलती है और बुद्धि भी कभी अधम में नहीं लगती है।

एष धर्मो ध्रुवो राजंश्चरैनमविचारयन् ।
मा च शंका तत्र ते स्यात् कथंचिदपि पार्थिव ॥३१॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक ३१,

यह अटल धर्म है आप इसके करने में सन्देह और संकोच कुछ भी न करें।

ते समेत्य ततः सर्वे कथयन्ति स्म भारत ।
अथ द्वैपायनो राजन्नभ्यागंच्छद् यदृच्छया ॥३३॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक ३३,

ऐसी बातें हो ही रही थीं कि अकस्मात महर्षि ब्यास उसी समय वहां आ पहुँचे।

राजा द्रुपद ने ब्यास जी से प्रश्न किया कि—

कथमेका बहूनां स्याद् धर्मपत्नी न संकरः ।
एतन्मे भगवान् सर्वं प्रब्रवीतु यथातथम् ॥५॥
महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक ५,

हे भगवान ! एक स्त्री बहुतों की धर्मपत्नी कैसे हो सकती है जिससे धर्म संकरता भी न हो, यह आप ठीक ठीक बतावें ।

व्यास जी ने कहा कि—

अस्मिन् धर्मे विप्रलब्धे लोकवेदविरोधके ।
यस्य यस्य मतं यद् यच्छ्रोतुमिच्छामि तस्य तत् ॥६॥
महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक ६,

इस लोक के और वेद के विरुद्ध धर्म के सम्बन्ध में जिस-जिसका जो-जो मत हो उसको मैं सुनना चाहता हूँ ।

इस पर राजा द्रुपद ने अपना मत यह बताया कि—

अधर्मोऽयं मम मतो विरुद्धो लोकवेदयोः।
न ह्येका विद्यते पत्नी बहूनां द्विज सत्तम ॥७॥
महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक ७,

मेरी सम्मत्ति में तो यह लोक और वेद दोनों के विरुद्ध है। एक स्त्री बहुतों की पत्नी हो यह नियम कहीं भी नहीं हैं।

न चाप्याचरितः पूर्वैरयं धर्मो महात्मभि।
न चाप्यधर्मो विद्वद्भिश्चरितव्यः कथंचन ॥८॥
महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक ८,

पहले महात्मा पुरुषों ने भी ऐसे धर्म का आचरण कभी नहीं किया है और विद्वान पुरुषों को अधर्म का आचरण कदापि नहीं करना चाहिये।

यवीयसः कथं भार्यां ज्येष्ठो भ्राता द्विजर्षभ।
ब्रह्मन सम्भिवर्तेत सवृन्तःसस्तपोधन ॥१०॥

न तु धर्मस्य सूक्ष्मत्वाद् गतिं विद्म कथंचन ।
अधर्मो धर्म इति वा व्यवसायो न शक्यते ॥११॥
कर्तुमस्मद्विधैर्ब्रह्मंस्ततोऽयं न व्यवस्यते ।
पञ्चानां महिषी कृष्णा भवत्विति कथंचन ॥१२॥
महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक १०, ११, १२,

धृष्टद्युम्न ने कहा कि—बड़ा भाई जो सदाचारी है वह छोटे भाई की पत्नी से समागम कैसे कर सकता है ? हम किसी प्रकार भी ऐसी सम्मति नहीं दे सकते हैं कि द्रौपदी पांच पतियों की पत्नी बने ।

न मे वागनृतं प्राह नाधर्मे धीयते मतिः ।
वर्तते हि मनो मेऽत्र नैषोऽधर्मः कथंचन ॥१३॥
महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक १३,

इस पर युधिष्ठिर जी ने कहा कि—मेरी वाणी कभी

झूठ नहीं बोलती है और मेरी बुद्धि कभी अधर्म में नहीं लगती है इस विवाह में मेरा मत है, इसलिए यह अधर्म नही है।

श्रूयते हि पुराणेऽपि,
जटिला नाम गौतमी।
ऋषीनध्यासितवती,
सप्त धर्मभृतां वरा ॥१४॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक १४,

पुराणों में सुना जाता है-कि गौतम गोत्र की कन्या जटिला नाम वाली ने एक साथ सात ऋषियों से विवाह किया था।

तथैव मुनिजा वार्क्षी,
तपोभिर्भावितात्मनः।
संगताभूद्दश भ्रातॄनेक,
नाम्नः प्रचेतसः ॥१५॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५, श्लोक १५,

गुरोर्हि वचनं
प्राहुर्धर्म्यं धर्मज्ञसत्तम ।
गुरूणाँ चैव सर्वेषां,
माता परमको गुरुः ॥१६॥
सा चाप्युक्तवती वाचं,
भैक्षवद् भुज्यतामिति ।
तस्मादेतदहं मन्ये परं,
धर्मं द्विजोत्तम ॥१७॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक १६, १७

इसी प्रकार वार्क्षी नाम की कन्या ने दश प्रचेताओं से विवाह किया था। हमारी माता ने भी यही कहा था कि—तुम सब भाई इसका उपभोग करो, इससे हम सब के सांझे विवाह को अधर्म नहीं मानते हैं।

एवमेतद् यथा प्राह,
धर्मचारी युधिष्ठिरः ।

अनृतान्मे भयं तीव्रं,
मुच्येऽहमनृतात् कथम् ॥१८॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक १८,

कुन्ती बोली—युधिष्ठिर ने जो कहा है वह ठीक है मैंने यही आज्ञा इनको दी है मुझको झूंठ से बहुत भय लगता है, यदि ऐसा न होगा तो मैं झूंठ से कैसे बचूंगी ।

अनृतान्मोक्ष्यसे भद्रे,
धर्मश्चैव सनातनः ।
न तु वक्ष्यामि सर्वेषां
पांचाल शृणु मे स्वयम् ॥१९॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक १९,

सब की बातें सुनकर ब्यास जी ने कहा कि-हे कुन्ती तुम झूंठ से बच जाओगी । [एक स्त्री के बहुत पतियों का होना] यह सनातन धर्म है ।

यथायं विहितो धर्मो,
यतश्चायं सनातनः ।
यथा च प्राह कौन्तेय,
स्तथा धर्मो न संशयः ॥२०॥
तत उत्थाय भगवान्,
व्यासो द्वैपायनः प्रभुः ।
करे गृहीत्वा राजानं,
राजवेश्म समाविशत् ॥२१॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक २०, २१,

द्रुपद से व्यास जी ने कहा कि—मैं सबके सम्मुख नहीं कहूँगा हे पांचाल राज ! मेरी बात तुम एकान्त में सुनो। यह कह कर द्रुपद का हाथ पकडकर व्यास जी राज भवन के अन्दर ले गये। और एक कहानी सुनाई वह कहानी इस प्रकार है।

यथा

पुरा वै नैमिषारण्ये,

देवाः सत्रमुपासते ।

तत्र वैवस्वतो राजञ्शा,

म मकरोत् तदा ॥१॥

ततो यमो दीक्षितस्तत्र राजन्,

नामारयत् कंचिदपि प्रजानाम् ।

ततः प्रजास्ता बहुला बभूवुः,

कालातिपातान्मरणप्रहीणाः ॥२॥

सोमश्च शक्रो वरुणः कुबेरः,

साध्या रुद्रा वसवोऽथाऽश्विनौच ।

प्रजापतिर्भुवनस्य प्रणेता,

समाजग्मुस्तत्र देवास्तथान्ये ॥३॥

ततोऽब्रुवन् लोकगुरुं समेता,

भयात् तीव्रान् मानुषाणां च वृध्या ।

तस्माद् भयादुद्विजन्तः सुखेप्सवः,

प्रयाम सर्वे शरणं भवन्तम् ॥४॥

किं वो भयं मानुषेभ्यो,
यूयं सर्वे यदामराः ।
मा वो मर्त्य सकाशाद्,
वै भयं भवतुमर्हति ॥५॥

मर्त्या अमर्त्याः संवृत्ता,
न विशेषोऽस्ति कश्चन ।
अविशेषा द्विजन्तो,
विशेषार्थमिहागताः ६॥

वैवस्वतो व्यापृतः सत्रहेतो,
स्तेन त्विमे न म्रियन्ते मनुष्याः ।
तस्मिन्नेकाग्रे कृत सर्व कार्ये,
तत एष भवितैवान्तकालः ॥७॥

वैवस्वतस्यैव तनुर्विभक्ता,
वीर्येण युष्माकमुत प्रयुक्ता ।
सैषामन्तो भविता ह्यन्तकाले,
तत्र वीर्य भविता नरेषु ॥८॥

ततस्तु ते पूर्वजदेव वाक्यं,

श्रुत्वा जग्मुर्यत्र देवायजन्त ।

समासीनास्ते समेता महाबला,

भागीरथ्यां ददृशु पुण्डरीकम् ॥९॥

दृष्ट्वा च तद् विस्मितास्तेबभूवु,

स्तेषामिन्द्रस्तत्र शूरो जगाम ।

सोऽपश्यद् योषामथ पावक प्रभां,

यत्र देवी गङ्गा सततं प्रभृता ॥१०॥

सा तत्र योषा रुदती जलार्थिनी,

गङ्गां देवीं व्यवगाह्य व्यतिष्ठत् ।

तस्याश्रु बिन्दुः पतितो जलेय,

स्तत् पद्ममासीदथ तत्र काञ्चनम् ॥११॥

तदद्भुतं प्रेक्ष्य वज्री तदानीं,

मपृच्छत तां योषितमन्तिकाद् वै ।

का त्वं भद्रे रोदिषि कस्य हेतो,

र्वाक्यं तथ्यं कामयेऽहं ब्रवीहि ॥१२॥

त्वं वेत्स्यसे मामिह यामि शक्र,
यदर्थं चाहं रोदिमि मन्दभाग्या ।
आगच्छ राजन् पुरतो गमिष्ये,
द्रष्टासि तद् रोदिमि यत्कृतेऽहम् ॥१३॥

तां गच्छन्तीमन्वगच्छत् तदानीं,
सोऽपश्यदारात् तरुणं दर्शनीयम् ।
सिंहासनस्थं युवती सहायं,
क्रीडन्तमैक्षद् गिरिराज मूर्ध्नि ॥१४॥

तमब्रवीद् देवराजो ममेदं,
त्वं विद्धि विद्वन् भुवनं वशे स्थितम् ।
ईशोऽहमस्मीति समन्युरब्रवीद्,
दृष्ट्वा तमक्षैः सुभृशं प्रमत्तम् ॥१५॥

क्रुद्धं च शक्रं प्रसमीक्ष्य देवो,
जहास शक्रं च शनैरुदैक्षत ।
संस्तम्भितोऽभूदथ देवराजः,
स्तेनोक्षितः स्थाणुरिवावतस्थे ॥१६॥

यदा तु पर्याप्तमिहास्य क्रीड़या,

तदा देवीं रुदतीं तामुवाच ।

आनीयतामेष यतोऽहमारा-,

न्नैनं दर्पः पुनरप्याविशेत् ।।१७।।

ततः शक्रः स्पृष्टमात्रस्तया तु,

स्रस्तैरङ्गैः पतितोऽभूद्धरण्याम् ।

तमब्रवीद् भगवानुग्रतेजा,

मैवं पुनः शक्र कृथा कथंचित् ।।१८।।

निवर्तयैनं च महाद्रिराजं,

बलं च वीर्यं च तवाप्रमेयम् ।

छिद्रस्य चैवाविश मध्यमस्य,

यत्रासते त्वद्विधाः सूर्यभासः ।।१९।।

स तद् विवृत्य विवरं महागिरे,

स्तुल्यद्युतींश्चतुरोऽन्यान् ददर्श ।

स तानभिप्रेक्ष्य बभूव दुःखितः,

कच्चिन्नाहं भविता वै यथेमे ॥२०॥

ततो देवो गिरिशो वज्रपाणिं,

विवृत्य नेत्रे कुपितोऽभ्युवाच ।

दर्शमेतां प्रविश त्वं शतक्रतो,

यन्मां बाल्यादवमंस्थाः पुरस्तात् ॥२१॥

उक्तस्त्वेवं विभुना देवराजः,

प्रावेपतार्तो भृशमेवाभिषङ्गात् ।

स्रस्तैरङ्गैरनिलेनेव नुन्न-,

मश्वत्थपत्रं गिरिराज मूर्धिन ॥२२॥

स प्राञ्जलि र्वै वृषवाहनेन,

प्रवेपमानः सहसैवमुक्तः ।

उवाच देवं बहुरूप मुग्रं,

स्त्रष्टाशेषस्य भुवनस्य त्वं भवाद्यः ॥२३॥

तमब्रवीद्दुग्र वर्चाः प्रहस्य,

नैवं शोलाः शेषमिहाप्नुवन्ति ।

एतेऽप्येवं भवितारः पुरस्तात्,

तस्मादेतां दरीमाविश्य शेध्व ॥२४॥

तत्र ह्येवं भवितारो न संशयो,

योनिं सर्वे मानुषीमाविशध्वम् ।

तत्र यूयं कर्म कृत्वाविषह्यं,

बहूनन्यान् निधनं प्रापयित्वा ॥२५॥

आगन्तारःपुनरेवेन्द्रलोकं,

स्वकर्मणा पूर्वजितं महार्हम ।

सर्वं मया भाषितमेतदेवं,

कर्त्तव्यमन्यद् विविधार्थयुक्तम ॥२६॥

गमिष्यामो मानुषं देवलोकाद्,

दुराधरो विहितो यत्र मोक्षः ।

देवास्त्वस्मानादधीरञ्जनन्यां,

धर्मो वायुर्मघवानश्विनौ च।

अस्त्रौद्व्यैर्मानुषान् बोधयित्वा,

आगन्तारः पुनरेवेन्द्रलोकम् ॥२७॥

एतच्छ्रुत्वा वज्रपाणिर्वचस्तु,

देवश्रेष्ठं पुनरेवेदमाह।

वीर्यश्रेष्ठं पुरुषं कार्यहेतोः,

देयामेषां पञ्चमं मत्प्रसूतम् ॥२८॥

विश्वभुक् भूतधामा च

शिबिरिन्द्रः प्रतापवान्।

शान्तिश्चतुर्थस्तेषां वै,

तेजस्वी पञ्चमः स्मृतः ॥२९॥

तेषां कामं भगवानुग्रधन्वा,

प्रादादिष्टं संनिसर्गाद् यथोक्तम्।

तां चाप्येषां योषितं लोककान्तां,

श्रियं भार्यां व्यदधान्मानुषेषु ॥३०॥

भावार्थ-

एक बार यमराज एक लम्बा यज्ञ कर रहे थे। यमराज यज्ञ में व्यस्त थे। इस कारण मनुष्यों आदि की मृत्यु बन्द हो गई बहुत देर तक कोई भी न मरा तब सब देव इकट्ठे होकर ब्रह्मा जी के पास गये कि— महाराज! अब मनुष्य आदि कोई नहीं मरते हैं पृथ्वी मनुष्यों से भरती जा रही है इस कारण हमको बहुत भय लग रहा है।

ब्रह्मा जी ने कहा कि—तुम देव तो सबके सब अमर हो, तुमको मनुष्यों से भय क्यों लग रहा है?

देव बोले कि—पहिले हम ही अमर थे अब सभी मनुष्य आदि अमर हो गये हैं, अब हमारी विशेषता ही कुछ न रही।

इस पर ब्रह्मा जी ने कहा कि—तुम चिन्ता मत करो, यमराज जी का यज्ञ समाप्त होते ही मरने का कार्य फिर आरम्भ हो जायेगा। मनुष्यादि सभी मरने लगेंगे कोई भी बच नहीं सकेगा।

यह सुनकर सब लोग वापिस चले गये। एक दिन देव गण गंगा स्नान करने गंगा पर गये वहां गंगा जल में एक सुन्दर कमल बहता दिखाई दिया, उसको देख कर सब देव आश्चर्य में पड गये।

और सोचने लगे :—

यह कमल कहां से बह कर आया है इसका पता लगाने को देवों के राजा इन्द्र गंगा के किनारे-किनारे दूर तक चले गये। ऊपर जाकर देखा कि—एक परम सुन्दरी स्त्री गंगा में खड़ी रो रही है। उसकी आंखों से जो आँसू गिरता है वह सुन्दर कमल बन जाता है।

इन्द्र ने उससे पूछा कि—तुम कौन हो? और किस लिए रोती हो?

वह बोली कि—मैं एक अबला हूँ! आप मेरे साथ चलें तो आपको पता लग जायेगा कि—मैं क्यों रोती हूँ।

इन्द्र उसके साथ चले गये हिमालय के उच्च शिखर पर जाकर देखा कि–एक सुन्दर युवक परम सुन्दर युवती के साथ क्रीड़ा कर रहा है। वह सुन्दर युवक उस क्रीड़ा में ऐसा निमग्न था कि—उसको यह भी न पता लगा कि-कोई मेरे पास आया है।

इन्द्र ने क्रुद्ध होकर कहा कि—तुम जानते नहीं हो कि–मैं कौन हूं, मेरा ही यहां सारा राज्य है।

वह देवपुरुष इन्द्र की बात सुनकर हंस पड़े और आंख उठाकर उन्होने इन्द्र की ओर देखा। उनकी दृष्टि पड़ते ही इन्द्र का शरीर काष्ठ की तरह अकड़ा ही रह गया, निश्चेष्ट हो गया।

ज्यों ही उनकी क्रीड़ा समाप्त हुई वह उस रोने वाली स्त्री से बोले कि—

इस इन्द्र को जहां मैं हूँ वहीं ले आ। उस स्त्री ने इन्द्र को ज्यों ही हाथ लगाया त्यों ही उसके सब अंग ढीले पड़ गये और इन्द्र भूमि पर गिर पड़े।

तब उस तेजस्वी रुद्र ने कहा कि—इन्द्र! फिर कभी ऐसा घमण्ड मत करना, तुम बलवान हो इस गुफा पर से पत्थर को हटाओ और इस गुफा में घुस जाओ। भीतर जाकर देखो तुम्हारे जैसे चार इन्द्र इस गुफा में और हैं।

इन्द्र ने भीतर जाकर देखा तो चार इन्द्र और दिखाई दिए।

महादेव जी ने कहा--

तुम पांचो पृथ्वी पर जाकर मनुष्य का जन्म लो। और इसी स्वर्ग की लक्ष्मीं से तुम्हारा पांचों का विवाह होगा।

व्यास जी ने कहा कि—हे द्रुपद यह द्रौपदी वही स्वर्ग की लक्ष्मी है जो रोती थी और जिसके आंसुओं से कमल बन जाते थे और ये पांचो पाण्डव वे ही पांचों इन्द्र है। इनके नाम ये हैं—

१. विश्वभुक

२. भूतधामा

३. शिवि

४. शांति

५. तेजस्वो

यहां इस गप्प के साथ यह भो गप्प जोड़ी है कि—व्यास जी ने द्रुपद को दिव्य दृष्टि देकर, वह पाँचों इन्द्र और स्वर्ग को लक्ष्मो भो प्रत्यक्ष दिखला दिये॥

यथा

इदं चान्यत् प्रीतिपूर्वं नरेन्द्र,
दददानि ते वरमत्यद्भुतं च ।
दिव्यं चक्षुः पश्य कुन्तीसुतांस्त्व,
पुराणैर्दिव्यैः पूर्व देहैरुपेतान् ॥३७॥

ततो व्यासः परमोदारकर्मा,
शुचिर्विप्रस्तपसा तस्य राज्ञः ।
चक्षुर्दिव्यं प्रददौ तांश्च सर्वान्,
राजा पश्यत् पूर्व देहैर्यथावत् ॥३८॥

ततो दिव्यान् हेमकिरीटमालिनः,
शक्रप्रख्यान् पावकादित्य वर्णान् ।
बद्धापीडांश्चारु रूपांश्च यूनो,
व्यूढोरस्कांस्तालमात्रान् ददर्श ॥३९॥

दिव्यैर्वस्त्रैररजोभिः सुगन्धैः,
र्माल्यैश्चाग्र्यैः शोभमानान्तीव ।

साक्षात् त्र्यक्षान् वा वसूंश्चापि रुद्रा-

नादित्यान् वा सर्वगुणोपपन्नान् ॥४०॥

तान् पूर्वेन्द्रानभिवीक्ष्याभिरूपान-,

शक्रात्मजं चेन्द्ररूपं निशम्य ।

प्रीतो राजा द्रुपदो विस्मितश्च,

दिव्यां मायां तामवेक्ष्याप्रमेयाम् ॥४१॥

तां चैवाग्र्यां स्त्रियमतिरूपयुक्तां,

दिव्यां साक्षात् सोमवह्नि प्रकाशाम् ।

योग्यां तेषां रूपतेजोयशोभिः,

पत्नीं मत्वा हृष्टवान् पार्थिवेन्द्रः ॥४२॥

स तद् दृष्ट्वा महदाश्चर्यं रुपं,

जग्राह पादौ सत्यवत्याः सुतस्य ।

नैतच्चित्रं परमर्षे त्वयीति,

प्रसन्नचेताः स उवाच चैनम् ॥४३॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९६ श्लोक ३७, से ४३,

भावार्थ–

नरेन्द्र ! मैं तुम्हें प्रसन्नता पूर्वक एक और अदभुत वर के रूप में यह दिव्य दृष्टी देता हूँ ।

इससे सम्पन्न होकर तुम कुन्ती के पुत्रों को उनके पूर्व कालिक पुण्यमय दिव्य शरीरों से सम्पन्न देखो। पश्चात ब्रह्मर्षि ब्यास जी ने अपनी तपस्या के प्रभाव से राजा द्रुपद को दिव्य दृष्टी प्रदान की, जिससे उन्होंने समस्त पाण्डवों को पूर्व शरीरों से सम्पन्न वास्तविक रूप में देखा ।

राजा द्रुपद ने भी उनको दिव्य शरीर से सुशोभित सोने की मालाओं सहित जो सूर्य व चन्द्र की तरह कान्तिमान हो रहे थे, जो अत्यन्त मनोहर एवं दिव्य अलंकार को धारण किये हुए थे, उनका दर्शन किया, वे उत्तम गन्धों एवं सुन्दर मालाओं से सुशोभित सर्व गुण सम्पन्न दिखाई देते थे ।

ब्यास जी ने महाराजा द्रुपद को दिव्य दृष्टी देकर वह पांचों इन्द्र और वह स्वर्ग की लक्ष्मी प्रत्यक्ष भी दिखला दिये ।

जब इन गपोड़ों पर भी सन्तोष न हुआ तो एक गपोड़ा इसके साथ और भी व्यास जी के नाम से घड़ा गया।

वह आप निम्न श्लोकों में देखिये। जिसका भावार्थ पहले दिया जाता है एवं पाठकों की पूरी सन्तुष्टी के लिए श्लोक भी उसके पश्चात दिये गये हैं।

भावार्थ-

अर्थात व्यास जी ने कहा कि—

राजन!

(अपनी पुत्री के एक और जन्म का वृतान्त भी सुनो)—

एक तपोवन में किसी महात्मा मुनि की कोई कन्या रहती थी, सती साध्वी एवं रूपवती होने पर भी उसे योग्य पति की प्राप्ति नहीं हुई।

उसने कठोर तपस्या द्वारा भगवान शंकर को प्रसन्न एवं सन्तुष्ट किया, महादेव जी प्रसन्न होकर साक्षात् प्रकट होकर उस मुनि कन्या से बोले—

"तुम मनोवान्छित वर मांगो"।

उनके यों कहने पर उस मुनि कन्या ने वरदामक उस महेश्वर से बार-बार कहा में सर्व गुण सम्पन्न पति चाहती हूं।

देवेश्वर भगवान शंकर प्रसन्नचित्त होकर उसे वर देते हुए बोले,—

भद्रे! तुम्हारे पांच पति होंगे।

यह सुनकर उसने महादेव जी को प्रसन्न करते हुए पुनः यह बात कही।

शंकर जी!

मैं तो आपसे एक ही गुणवान पति प्राप्त करना चाहती हूँ।

तब देवाधिदेव महादेव जी ने मन ही मन अत्यन्त स तुष्ट होकर उससे यह शुभ वचन कहा ।

भद्र ! तुमने "पति दीजिये" इस वाक्य को पाँच बार दोहराया है ।

इसलिए मैंने जो पहले कहा है वैसा ही होगा। तुम्हारा कल्याण हो ।

किन्तु तुम्हें दूसरे शरीर में प्रवेश करने पर यह सब प्राप्त होगा ।

हे राजन द्रुपद ! वही मुनि कन्या तुम्हारी इस दिव्य रूपिणि पुत्र के रूप में फिर उत्पन्न हुई है ।

अतः वह प्रषत् वंश की सती कन्या कृष्णा पहले से ही पांच पतियों की पत्नी नियत की गयी है ।

वह स्वर्ग लोक की लक्ष्मी है जो पाण्डवों के लिए तुम्हारे महायज्ञ में उत्पन्न हुई है ।

इसने अत्यन्त घोर तपस्या करके इस जन्म में तुम्हारी पुत्री होने का सोभाग्य प्राप्त किया है ।

महाराज द्रुपद ! वही यह देवसेवित सुन्दरी देवी अपने ही कर्म से पांच पुरुषों की एक ही पत्नी नियत की गयी है, स्वयं ब्रह्मा जी ने इसे देव स्वरुप पाण्डवों की पत्नी होने के लिए रचा है। अब आपको जो अच्छा लगे वह करो।

ये पाँचों पाराडव ही इसके पति होंगें।

कोई भी अज्ञानता की राह में ले जाने वाला अथवा सच्चे भारतीय इतिहास का, दुश्मन कह सकता है कि पता नहीं कहाँ से यह कहानी बनाकर डाल दी गई है। अब आप महाभारत के श्लोकों को भी देखियें जिनका यह अर्थ है।

यथा–

पहली गप्प में अधिक बल दिखाई न दिया इसलिए गप्प के पीछे यह गपोडा तैयार किया कि—

शिवजी ने जब इसको पाँच पुरुषों की पत्नी बना दिया है तो अब इसको कौन रोक सकता है ?

यहां तक जितनी बातें आई हैं, यदि उनको बुद्धि की कसौटी पर परखा जायेगा तो स्पष्ट पता लगेगा कि :—

यह सब की सब मिथ्या मिलावट है।

(१) माता कुन्ती को स्वयंबर का पता कितने ही दिनों पहले से था, भीमसेन ने महाराक्षस बकासुर का वध करने के पश्चात उसी ब्राह्मण के घर में यम, नियमों का पालन करते हुए रहने लगे वहीं वह विद्वान ब्राह्मण आया जिसके द्वारा स्वयंबर का पता लगा :—

बकासुर महाराक्षस का वध —

ततः स भग्नपार्श्वाङ्गो

नदित्वा भैरवं रवम् ।
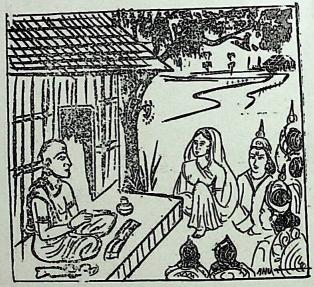
नये आगन्तुक ब्राह्मण द्वारा पाण्डवों को स्वयम्वर की सूचना देना ।

शैलराज प्रतीकाशो,

गतासुरभवद् बकः ॥१॥,

महाभारत आदि पर्व अध्याय १६३ श्लोक १

राजन ! पसली की हड्डियों के टूट जाने पर पर्वत के समान विशालकाय बकासुर भयंकर चीत्कार करके प्राणरहित हो गया।

स्वयम्बर की सूचना —

ततः कति पयाहस्य,

ब्राह्मणः संशितव्रतः ।

प्रतिश्रयार्थी तद् वेशम,

ब्राह्मणस्य जगाम ह ॥३॥

स सम्यक् पूजयित्वा तं,

विप्रं विप्रर्षभस्तदा ।

ददौ प्रतिश्रयं तस्मै,

सदा सर्वातिथिव्रतः ॥४॥

ततस्ते पाण्डवाः सर्वे,
सह कुन्त्या नरर्षभा।

उपासांचक्रिरे विप्रं कथ,
यन्त कथाः शुभाः ॥५॥

कथयामास देशाश्च,
तीर्थानि सरितस्तथा।

राजश्च विविधा,
श्चर्यान् देशांश्चैव पुराणि च ॥६॥

स तत्राकथयद् विप्रः,
कथान्ते जनमेजय।

पञ्चालेष्वद भुताकारं,
याज्ञसेन्याः स्वयंवरम् ॥७॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १६४ श्लोक ३,४,५,६,७

अर्थात :—

तदनन्तर कुछ दिनों के बाद एक कठोर नियमों का

पालन करने वाला ब्राह्मण ठहरने के लिए उन ब्राह्मण देवता के घर पर आया। उस ब्राह्मण का सदा घर पर आये हुए सभी अतिथियों की सेवा करने का व्रत था। उन्होंने आगन्तुक ब्राह्मण की भलीभाँति पूजा करके उसे ठहरने के लिए स्थान दिया। वह ब्राह्मण बड़ी सुन्दर एवं कल्याणमयी कथाएं कह रहा था, (अतः उन्हें सुनने के लिए) सभी नर श्रेष्ठ पाण्डव, माता कुन्ती के साथ उसके निकट जा बैठे।

उसने अनेक देशों, तीर्थों, नदियों, राजाओं, नाना-प्रकार के आश्चर्य जनक स्थानों तथा नगरों का वर्णन किया, जनमेजय ! बातचीत के अन्त में उस ब्राह्मण ने वहां यह भी बताया कि पांचाल देश में यज्ञसैन कुमारी द्रौपदी का अद्भुत स्वयम्बर होने जा रहा है।

ब्राह्मण द्वारा कुन्ती को पाण्डवों सहित स्वयबर में जाने का आग्रह —

श्रुत्वा - पुरोहितेनोक्तं,
पाञ्चालः प्रीतिमांस्तदा।

घोषया मास नगरे,
द्रौपधास्तु स्वयंवरम् ॥८६॥

पुरायमासे तु रोहिरायां,
शुक्लपक्षे शुभे तिथौ।

दिवसैः पञ्चसहात्या,
भविष्यति स्वयंबरः ॥८७॥

द्ेव गन्धर्वपक्षाश्च,
ऋषयश्च तपोधनाः।

स्वयम्बरं द्रष्टुकामा,
गच्छन्त्येव न संशयः ॥८८॥

तव पुत्रा महात्मानो,
दर्शनोया विशेषतः।

यद्रच्छया तु पाञ्चाली,
गच्छेद्द वामहयमं पतिम् ॥८६॥

को हि जानाति लोकेषु,

प्रजापतिविधिं वरम् ।

स्तस्मात् सपुत्रा गच्छेन्था,

ब्राह्मण्यै यदि रोचते ॥६०॥

नित्यकालं सुभिक्षास्ते,

पञ्चालास्तु तपोधने ॥६१॥

यज्ञसेनस्तु राजासौ,

ब्रह्मण्यः सत्यसङ्गरः ।

ब्रह्मण्या नागराश्चाथ,

ब्राह्मणाश्चातिथि प्रियाः ॥६२॥

नित्य कालं प्रदास्यन्ति

आमन्त्रणमयाचितम् ॥६३॥

अहं च तत्र गच्छामि,

मम्मैभिः सह शिष्यकैः ।

एकसार्था: प्रयाता: स्मो

ब्राह्मरायै यदि रोचते ॥९४॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १६६ श्लोक ८६ से ९४

अर्थ —

आगन्तुक ब्राह्मरा कहता है—

पुरोहित की बात सुनकर पांचाल राज को बड़ी प्रसन्नता हुई, उन्होंने नगर में द्रौपदी का स्वयम्बर घोषित करा दिया, पौष मास के शुक्ल पक्ष में शुभ तिथि (एकादशी) को रोहिणी नक्षत्र में वह स्वयम्बर होगा।

जिसके लिए आज से पूरे पचहत्तर दिन शेष हैं, ब्राह्मणी (कुन्ती) देवता, गन्धर्व, यक्ष और तपस्वी ऋषि भी स्वयम्बर देखने के लिए अवश्य जाते हैं। तुम्हारे सभ महात्मा पुत्र देखने में परम सुन्दर हैं। पांचाल राज पुत्री कृष्णा इनमें से किसी को अपनी इच्छा से पति चुन सकती है। अथवा तुम्हारे मंझले पुत्र को अपना पति बना सकती है। संसार में विधाता के उत्तम विधान को कौन जान सकता है ?
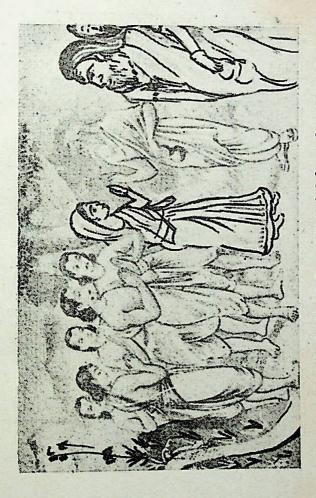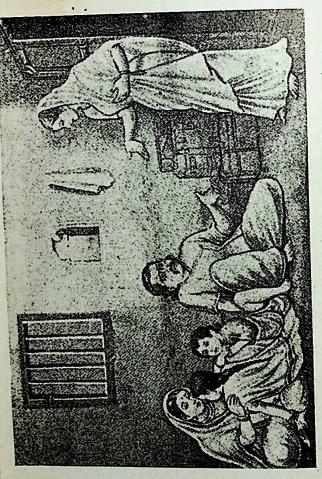
पाण्डवों की रास्ते में ब्राह्मणों की टोली से बातचीत

कुन्ती द्वारा ब्राह्मण परिवार को सान्त्वना देना

अतः यदि मेरी बात तुम्हे अच्छी लगे, तो तुम अपने पुत्रों के साथ पंचाल देश में अवश्य जाओ।

तपोधने ! पंचाल देश में सदा सुभिक्ष रहता है। राजा यज्ञसैन सत्य प्रतिज्ञ होंने के साथ ही ब्राह्मणों के भक्त हैं, वहां के नागरिक भी ब्राह्मणों के प्रति श्रद्धा भक्ति रखने वाले हैं। उस नगर के ब्राह्मण भी अतिथियों के बड़े प्रेमी हैं, वे प्रतिदन बिना मांगे ही न्यौता देंगे मैं भी अपने इन शिष्यों के साथ वहीं जाता हूँ।

ब्राह्मणी ! यदि ठीक जान पड़े तो चलो। हम सब लोग एक साथ ही वहां चले चलेंगे।

कुन्ती का पान्डवों सहित—
पन्चाल देश को प्रस्थान

ततः कुन्ती भीमसेन,
अर्जुनं यमजौ तथा।
उवाच गमनं ते च
तथेत्येवाब्रुवंस्तदा ॥१०॥

तत आमन्त्र्य तं विप्र,
कुन्ती राजन् सुतैः सह

प्रतस्थे नगरीं रम्यां,
द्रुपदस्य महात्मनः ॥११॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १६७ श्लोक १०, ११

तब कुन्ती ने भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव से भी चलने के विषय में पूछा ! उन सबने भी "तथास्तु' कहकर स्वीकृति दे दी।

फिर कुन्ती ने उन ब्राह्मण देवता से विदा लेकर अपने पुत्रों के साथ महात्मा द्रुपद की रमणीय नगरी की ओर जाने की तैयारी की।

हां से कुन्ती को पता था कि मेरे पुत्र स्वयम्बर के लिए जा रहे हैं।

रास्ते में ब्राह्मणों की टोली से बातचीत

ते प्रयाता नरव्याघ्रः,
सह मात्रा परंतपाः।

ब्राह्मणान् ददृशुर्मार्गे,

गच्छतः संगतान् बहून् ॥२॥

त ऊचुः ब्राह्मणा राजन्,

पाण्डवान् ब्रह्मचारिणः ।

क्व भवन्तो गमिष्यन्ति,

कुतो वाभ्यागता इह ॥३॥

परमं भोर गमिष्यामो,

द्रष्टुं चैव महोत्सवम् ।

भवद्भिः सहिताः सर्वे,

कन्यायास्तं स्वयंवरम् ॥२०॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १८३ श्लोक २, ३, २०

अर्थात :—

मनुष्यों में सिंह के समान वीर परंतप पाण्डव अपनी माता के साथ यात्रा कर रहे थे, उन्होंने मार्ग में देखा, बहुत से ब्राह्मण एक साथ जा रहे हैं ।

उन ब्रह्मचारी ब्राह्मणों ने पाण्डवों से पूछा—"आप लोग कहां जायेंगे, और कहां से आ रहे हैं ?

युधिष्ठिर ने कहा—ब्राह्मणों ! हम भी द्रुपद कन्या के उस श्रेष्ठ स्वयम्बर—महोत्सव को देखने के लिए आप लोगों के साथ चलेंगे।

पांचाल देश में पहुँचना—

स्वाध्यायवन्त: शुचयो,
मधुरा: प्रियवादिन: ।
आनुपूर्व्येण सम्प्राप्ता:,
पंचालान् पान्डुनन्दना: ॥५॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १८४ श्लोक ५

(प्रतिदिन) स्वाध्याय में तत्पर रहने वाले पवित्र, मधुर प्रकृति वाले तथा प्रियवादी पाण्डु कुमार इस तरह चलकर क्रमश: पंचाल देश में जा पहुँचे।
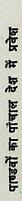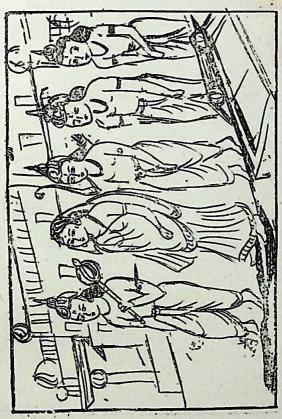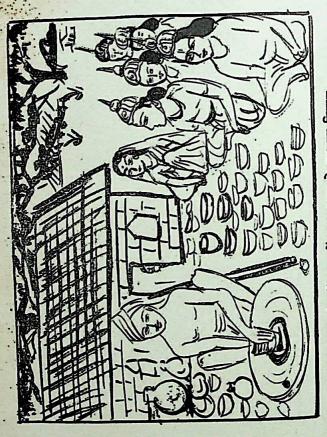
पाण्डवों का पांचाल देश में प्रवेश

पाञ्चाल देश में पाण्डवों का कुम्हार के घर पर निवास

कुहार के घर पर निवास

ते तु दृष्टवा पुरं तच्च,

स्कन्धावारं च पाण्डवाः ।

कुम्भकारस्य शालायां,

निवासं चक्रिरे तदा ॥६॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १८४ श्लोक ६

द्रुपद के नगर और उसकी चाहर दीवारी को देख कर पाण्डवों ने उस समय एक कुम्हार के घ र में अपने रहने की व्यवस्था की ।

विचार करिये कि-

जब अर्जुन ने लक्ष्य को भेदन कर लिया था, तब युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव को लेकर चले आये थे ।

जैसाकि लिखा है--

तस्मिस्तु शब्दे महति प्रवृद्धे,

युधिष्ठिरो धर्मंमतां वरिष्ठः ।

आवांस मेवोपजगाम शीघ्र साद्धिं,
यमाभ्यां पुरुषोत्तमाभ्याम् ॥२६॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १८७ श्लोक २६,

उस समय (लक्ष्य वेध के पश्चात) जब महान कोलाहल बढ़ने लगा, धर्मात्माओं में श्रेष्ठ युधिष्ठिर पुरुषोत्तम नकुल और सहदेव को साथ लेकर (आवासम् एव) निवास स्थान अर्थात कुम्हार के घर (कुन्ती के पास) ही चले गये।

पाण्डव जब स्वयम्बर सभा में गये तब उनकी माता कुन्ती की क्या दशा थी, इस पर भी ध्यान देना चाहिये।

पौर्णमास्यां घनैर्मुक्तौ,
चन्द्र सूर्या विवादितौ।
तेषां माता बहुविधं,
विनाशं पर्यचिन्तयत् ॥४३॥
अनागच्छत्सु पुत्रेषु,
भैक्षकालेऽभिगच्छति।

धार्तराष्ट्रैर्हता न ,

स्युर्विज्ञाय कुरुपुङ्गवाः ॥४४॥

मायान्वितैर्वा रक्षोभि, :

सुघोरैर्दृढवैरिभिः ।

विपरीतं मतं ज्ञातं व्यास ,

स्यापि महात्मनः ॥४५॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १८६ श्लोक ४३,४४,४५

वे ऐसे लगते थे, जैसे पूर्णमासी तिथि को मेघों की घटा से निकल कर चन्द्रमा और सूर्य प्रकाशित हो रहे हों, इधर भिक्षा का समय बीत जाने पर भी जब पुत्र नहीं लौटे, तब उनकी माता कुन्ती देवी स्नेह वश अनेक प्रकार की चिन्ताओं में डुबकर उनके विनाश की आशंका लगी ।

कहीं ऐसा तो नही हुआ कि, धृतराष्ट्र के पुत्रों ने कुरुश्रेष्ठ पाण्डवों को पहचान कर उनकी हत्या न कर डाली हो ।

अथवा दृढ़ता पूर्वक बैरभाव को मन में रखने वाले महाभयंकर मायावी राक्षसों ने तो कहीं मेरे बच्चों को नहीं मार डाला ?

क्या महात्मा व्यास के भी निश्चित मत के विपरीत कोई बात हो गयी ?

इन वाक्यों से स्पष्ट है कि--

माता कुन्ती पुत्रों के बिना बेचैन थी, घबरा रही थी, चिन्ता में पड़ी हुई थी, इस कारण उनके मन में भांति-भांति की आशंकाएं उठ रही थीं।

सोचिये जबकि महाभारत आदि पर्व अध्याय १८७ श्लोक २६ के अनुसार युधिष्ठिर जी, नकुल और सहदेव को साथ लेकर आ गये थे, तब उन तीनों को आते देखा और उनके साथ भीम और अर्जुन को न देखकर माता ने यह न पूछा होगा कि-तुम तीन ही क्यों आये हो ? वह दो कहां है ? वह क्यों नहीं आये ?

(४) मनोविज्ञान की गहराईयों में न जाया जाय तो साधारण बुद्धि से भी प्रत्येक मनुष्य इसको अनुभव

कर सकता है। कि ऐसी स्थिति में माता उनसे बिना पूछे रह नहीं सकती थी, इसलिए उसने अवश्य ही पूछा होगा।

(५) यदि माता ने पूछा होगा तो किसकी बुद्धि यह कह सकती है कि युधिष्ठिर जी और नकुल सहदेव ने स्वंयम्बर में हुई सफलता की बात न बताई होगी ? और यह न बताया होगा कि स्वयम्वर सभा में ही भीम और अर्जुन अभी रह गये हैं, वह शीघ्र ही आ जायेंगे।

(६) अथवा किसीकी बुद्धि मैं आता है कि—सत्यवादी धर्मात्मा युधिष्ठिर ने स्वयंबर की बात न बता कर यह झूठ बोल दिया हो कि,—वह दोनों भिक्षा मांगते रह गये हैं।

(७) प्रत्येक बुद्धिमान समझ सकता है,—माता अभी पूछने भी न पाई होगी उससे पहले ही, पुत्रो ने वह परम प्रसन्नता और हर्ष प्रहर्ष का समाचार माता की प्रसन्नता के लिए अवश्य सुना दिया होगा।

ऐसी स्थिति में माता को भिक्षा का भ्रम होना सर्वथा

अस्वाभाविक हैं।

स्पष्ट है कि
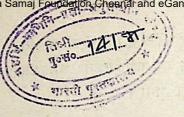
माता कुन्ती के नाम से यह मिथ्या बात बनाई गयी है।

यहाँ एक बात और भी विचार करने योग्य है कि स्वयम्बर को वह शर्त पूरी कर दी जो द्रोपदी के भाई धृष्टद्युम्न ने स्वयम्बर की सभा में कही थी।

तब लक्ष्य वेध करते ही द्रौपदी का विवाह तो अर्जुन के साथ नहीं हो गया था। फिर द्रोपदी को अर्जुन के साथ द्रुपद महाराज क्यो भेज देते ?

विवाह तो पीछे होना था, और द्रुपद महाराज के भवन में ही होना था, और आगे लिखा भी यही है कि-

ततोऽस्य वेष्माग्र्य जनो पशोभितं,
विस्तीर्णपद्मोत्पल भूषिताजिरम् ।
बलौघरत्नौघ विचित्रभावभौ,
नभो यथा निर्मलतारकान्वितम् ॥८॥

ततस्तु ते कौरव राजपुत्रा,

विभूषिताः कुण्डलिनो युवानः।
महार्हं वस्त्राम्बर चन्दनोक्षिताः,
कृताभिषेकाः कृतमंगलक्रियाः ॥९॥
पुरोहितेनाग्नि समानवर्चसा,
सहैव धौम्येन यथा विधि प्रभो।
क्रमेणं सर्वे विविशुस्ततः सदो,
महर्षभा गोष्ठभिवाभिनन्दिनः ॥१०॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९७ श्लोक ८, ९, १०,

भावार्थः—

राजा द्रुपद का वह भवन श्रेष्ठ पुरुषों से सुशोभित होने लगा, उसके आँगन को कमल आदि से सजाया गया था, वहाँ एक ओर सेनाएं खड़ी थी, दूसरी ओर रत्नों का ढेर लगा था, इससे वह राजभवन निर्मल नक्षत्रों से मुक्त आकाश की भाँति विचित्र शोभायमान हो रहा था।

युवावस्था से सम्पन्न राजकुमार पाँचों पान्डव वस्त्रालङ्कार से विभूषित और कुन्डलों से अलंकृत अभिषेक और स्वस्तिवाचन आदि मङ्गलाचार करके बहुमूल्य वस्त्रों और केसर चन्दनादि से सुशोभित हुए।

अग्नि के समान तेजस्वी पुरोहित धौम्य जी के साथ विधि पूर्वक बड़े-छोटे के क्रम से पाचों पान्डव प्रसन्नता पूर्वक विवाह मन्डप में गये।

जब इस प्रकार राजभवन में धूमधाम से राजपरिवारों की भाँति राजोचित शोभा के साथ विवाह होना था, तब महाराज

द्रुपद ने द्रौपदी को भीमसैन और अर्जुन के साथ कुम्हार के घर में विवाह से पहले ही भेज दिया, वह सर्वथा असंगत और बेतुकी बात है।

श्री राम जी ने महाराजा जनक के यहाँ धनुष तोड़कर राजा जनक की शर्त को पूरा किया था, क्या महाराजा जनक ने सीता जी को श्री राम, और लक्ष्मण, विश्वामित्र जी के निवास स्थान पर भेज दिया था ?

झूठी कहानी बनाने वाले ने झूठी बात का विश्वास बिठाने के लिए यहां तक भी गप्प मारनी आवश्यक समझी कि—

रात्री को द्रौपदी सोयी भी कुम्हार के घर में ही। और सोई भी कहां ?

"पांचों के पैरों की तरफ, भूमि पर ही सो रही"।

यदि इस गप्प को न बनाता तथा भीमसैन और अर्जुन के साथ पैदल-पैदल राजभवन से कुम्हार के घर में द्रौपदी को चुप-चाप न पहुंचाता तो कुन्ती से यह कैसे कहलवाया जाता कि—

"पाचों साथ मिलकर इसका उपभोग कर लो"

इस झूठ के लिए ही, यह सारी वेतुकी मिथ्या कहानी बनाई गयी है।

८. यदि थोड़ी देर के लिए इस सर्वथा मिथ्या बात को भी मान लिया जाय कि—

राजकुमारी होती हुई भी द्रौपदी पैदल-पैदल पान्डवों के पीछे-

पीछे चली आई थी, तो क्या भीमसैन और अर्जुन के साथ अकेली द्रौपदी ही थी, या और भी कोई लोग थे ?

लिखा तो वहां यह है कि—

ब्राह्मणैस्तु प्रतिछन्नौ,
रोरवाजिनवासिभिः ।
कृच्छ्रेणाजग्मतुस्तौ तु,
भीमसेन धनंजयौ ॥४१॥
महत्यथापराह्णे तु,
घनै सूर्यं इवावृतः ।
ब्राह्मणैः प्राविशत् तत्र,
जिष्णुर्भार्गववेश्म तत् ॥४७॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १८६ श्लोक ४१, ४७,

भावार्थ—

मृग चर्म को वस्त्र के रूप में धारण करने वाले ब्राह्मणों से घिरे होने के कारण भीमसैन और अर्जुन बड़ी कठिनाई से आगे बढ़ पा रहे थे ।

एवं उसी समय दिन के तीसरे पहर में बादलों से घिरे हुए सूर्य के समान ब्राह्मण मन्डली से घिरे हुए अर्जुन ने वहाँ उस कुम्हार के घर में प्रवेश किया ।

इन वाक्यों से स्पष्ट है कि—

अर्जुन अकेले न थे, उनके साथ ब्राह्मणों की भीड़ थी, इतनी भीड़ के साथ आये हुए अर्जुन को भिक्षा मांग कर लाया हुआ

समझना, यह समझ में नहीं आ सकता, और विशेष कर उस अवस्था में जबकि माता को पता ही नहीं था।

कि—आज मेरे पुत्र स्वयम्बर में गये हैं, भिक्षा के लिए नहीं और इसी लिए कुन्ती को दुर्योधन (कौरवों) द्वारा किये जाने वाले अनर्थ की आशंका थी।

भिक्षा मांगने तो वह रोज ही जाते थे तब तो कुन्ती कभी नहीं सोचती थी कि कौरवों द्वारा कुछ हो न गया हो। ब्राह्मणों की भीड़ का भी कुन्ती को कुम्हार के घर में बैठे हुए पता नहीं लगा, वह कुम्हार का घर था या ऐण्टवर्प का किला था ?

सर्व प्रकार से पता लगता है कि—

कुन्ती द्वारा ऐसी बात के कहे जाने की कहानी सर्वथा मिथ्या है।

कुन्ती ने युधिष्ठिर के पास जाकर कहा—

इयं तु कन्या द्रुपदस्य राज्ञः,
तवानुजाभ्यां मयि संनिविष्टा।
यथोचित पुत्र "मयापि चोक्तं",
"समेत्य भुञ्क्तेति नृप प्रमादात् ॥४॥
महाभारत आदि पर्व अध्याय १९० श्लोक ४,

यहां पर भी कुन्ती के वचन में "मयापिचोक्तं" है।

अर्थ—हे बेटे ! यह राजा द्रुपद की कन्या द्रोपदी है तुम्हारे छोटे भाई भीमसेन और अर्जुन ने इसे भिक्षा कह कर मुझे समर्पित किया, मैंने भी (इसे देखे बिना ही) भूल से (भिक्षा ही समझकर) उसके अनुरूप ही उत्तर दे दिया कि,

"तुम सब लोग मिल कर इसे खा लो"

नोट—प्रथम तो जो बात भूल (प्रमाद) से कही गयी है, उसका पालन करना तो उसके लिए भी आवश्यक नहीं है, जिसने भूल से कह दिया, दूसरों के लिए तो कहना ही क्या ?

भूल से कही गयी बात का तो प्रायश्चित्त किया जाना चाहिये, !

उसको पूरा करने का आग्रह तो दुराग्रह एवं अपराध है।

१०- कुन्ती का यह वचन भी विचारणीय है—

कि जब कुन्ती युधिष्ठिर के पास गयी तो उसने अपनी भूल भी बताई और यह भी कहा कि उसका कुछ ऐसा तरीका बताओ जिससे द्रौपदी को भी नीच योनियों में न भटकना पड़े तथा न पाप लगे।

यथा—

मया कथं नानृतमुक्तमद्य,
भवेत् कुरुणामृषभ ब्रवीहि।
पाञ्चाल राजस्य सुतामधर्मो,
न चोपवर्तेत न विभ्रमेच्च ॥५॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९० श्लोक ५,

अर्थ—कुरुश्रेष्ठ ! बताओ, अब कैसे मेरी बात झूठी न हो ? और क्या किया जावे, जिससे इस पांचाल राजकुमारी कृष्णा को न तो पाप लगे, और न नीच योनियों में ही भटकना पड़े।

अब बताओ कि उसे दुःख क्यों हो रहा है ? कोई गलत बात

हुई है, तभी तो, वरना उसे इसका कोई ऐसा रास्ता युधिष्ठिर से पूछने की क्या आवश्यकता थी ।

इस वाक्य से स्पष्ट है कि—पाचों पान्डव द्रौपदी के साथ विवाह करें तो इससे द्रौपदी को पाप लगेगा, ऐसा कुन्ती भी जानती और मानती थी, इस लिए ऐसा उपाय जानना चाहती थी, कि मेरे वाक्य का कोई ऐसा अर्थ निकल आवे या मेरा वचन ऐसे ढंग से पूरा हो जाये कि—"द्रौपदी को पाचों की पत्नी न बनाया जावे" । क्योंकि—इससे द्रौपदी को पाप लगेगा, और इस पाप के करने वाली या कराने वालों को नीच योनियों में भटकना पड़ेगा ।

११- कुन्ती का वाक्य यह बनाया गया कि—

कुटीगता सा त्वनवेक्ष्य पुत्रौ,
प्रोवाच "भुङ्क्तेति समेत्य सर्वे" ।
पश्चाच्च कुन्ती प्रसमीक्ष्य कृष्णां,
कष्टं मया भाषित मित्युवाच ।।२।।

महाभारत आदि पर्व अध्याय १६० श्लोक २,

अर्थ—उस समय कुन्ती देवी कुटिया के भीतर थी । उन्होंने अपने पुत्रों को देखे बिना ही उत्तर दे दिया, "(भिक्षा लाये हो तो) तुम सभी भाई मिलकर उसे "खालो" तत्पश्चात् द्रौपदी को देखकर कुन्ती ने चिन्तित होकर कहा—हाय ! मेरे मुंह से बड़ी अनुचित बात निकल गयी" ।

यहां पर भी उसे अपने कहे पर अफसोस हो रहा है । और फिर इस वाक्य में "भुज" धातु का प्रयोग होता है ।

रूदाधिगण में—

भुज पालना भ्यवहारयोः।

होता है—नीचे जो काशिका का पता देकर उदधृत किया गया है—

"भुज" के दो अर्थ हैं—

१- पालना
२- खाना वा (भोगना)

"पालन" अर्थ में भुऽक्त होता है यह आत्मने पदी है।

यथा—

भुज धातोरनवर्णऽर्थे वर्तमानात्—
आत्मने पदं भवति। भुजोऽवने अष्टा ॥६६॥
अष्टाध्यायी प्रथम अध्याय १ पाद ३ सूक्त ६६

व्याकरण महाभाष्य में—देखिये।
(१ अ०।३ पा०।२ आ०।६६ सूक्त)

काशिका अध्याय १ पाद ३ सूक्त ६६ में देखिये—
भुजोऽनवने ॥६६॥

भुज पालनाभ्यवहारयोरिति रुधादौ पठयते। तस्माद—नवनेऽपालने वर्त्तमानादात्मने पदं भवति। भुङ्क्ते। भुञ्जाते। भुञ्जते। अनवन इति किम्।

भुनक्त्येनमग्निराहितः। "अनवन" प्रतिषेधेन रोधादि कस्यैव ग्रहणं विज्ञायते न तौदादिकस्य भुजो कौटिल्य इत्यस्य। तेनेह न भवति। विभुजति पाणिम्॥

अनवन अर्थात पालन न करने के अर्थ में "भुज" धातु से आत्मने पद होता है। यदि व्याकरण के अनुसार "भुऽक्त" का अर्थ किया गया तो इसका अर्थ पालन करना होता है।

इस अर्थ से यह भाव निकलेगा कि—

विवाह तो एक ही के साथ हो, पालन सब मिलकर करें। इस अर्थ के चार लाभ हैं।

१. माता का वचन पूरा होना।

२. द्रौपदी को पाप न लगना।

३. किसी का नीच योनि में न भटकना।

४. पाणिनि जी महाराज का भी सम्मान रहना।

उस समय पाण्डव लोग आपत्ति में थे वारणावत के लाक्षाग्रह में से प्राण बचा कर भागे यत्र-तत्र भिक्षा मांग कर निर्वाह करते थे, कोई घर घाट नहीं था एकचक्रा नगरी में भी एक ब्राह्मण के घर में रहते थे। वहीं से स्वयम्बर में आये थे। ठहरने को एक कुम्भकार के घर में ठिकाना मिला था। ऐसी अवस्था में एक परम सुन्दरी स्त्री मिली, उसको पाचों भोगे, ऐसा पापकर्म तो कोई धर्मात्मा मनुष्य मन में भी कभी नहीं ला सकता क्रियान्वित की वात तो दूर रही।

हाँ ! इस दुरावस्था में सुन्दर नारी की रक्षा करनी अत्यन्त आवश्यक है। अतः यही अर्थ "भुऽक्त" का उचित हो सकता है। कि—इसकी रक्षा केवल इसका पति ही नहीं करे बल्कि सारे ही मिल कर इसकी रक्षा का भार अपने ऊपर लेंवे।

इस अर्थ में द्रौपदी के पांच पति होने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है।

१२. यदि कोई यह कहे कि—व्याकरण के नियम से स्वतन्त्र रूप में यहां परस्मै पद है, क्योंकि—कुन्ती का प्रयोजन यह नहीं है कि,—सब मिलकर इसका पालन करें तो वक्ता के अभिप्राय के अनुकूल अर्थ लेना चाहिये वह खाने का है, विवाह करने का नहीं, क्योंकि—कुन्ती ने स्त्री लाये हैं, ऐसा न समझकर यह यदि समझा कि उत्तम भोजन भिक्षा में लाये हैं. तो "भुङ्क्त समेत्य सर्वे" का अर्थ यह सीधा है कि—सब मिलकर खाओ, इस प्रकार कुन्ती का वचन तभी पूरा हो सकता है, कि द्रौपदी को मारकर या बिना मारे ही फाड़-फाड़ कर या नोंच-नोच कर खा जाते !

बक राक्षस या हिडिम्ब आदि को उन्होंने वैसा करते देखा वा सुना हुआ भी था ही वैसा ही करते तो माता का वचन सत्य हो जाता।

पाचों का विवाह एक द्रौपदी के साथ होने से वचन भी सत्य नहीं हो सकता था, हाँ ! पाप से लिप्त सबको होना पड़ता। इस प्रकार भी द्रौपदी के पांच पति होना युक्त नहीं हो सकता।

१३. युधिष्ठिर के मुंह से कहे जाने वाले जो वचन बनाए है, वह भी अनौचित्यों से सारे भरे हुए हैं, एक भी उनमें से युधिष्ठिर द्वारा कहे जाने योग्य नहीं है। आप एक-एक पर अलग-अलग विचार कर लीजिये—

युधिष्ठिर के नाम से बनाया हुआ एक वचन यह है कि—

अब्रवीत् सहितान् भ्रातॄन् मिथोभेदभयान्नपृः।

सर्वेषां द्रौपदी भार्या भविष्यति हि नः शुभा ॥१६॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९० श्लोक १६,

द्रौपदी के कारण हम सब भाइयों में फूट न पड़ जाये इस भय के कारण युधिष्ठिर ने यह कहा कि—

"द्रौपदी हम सब पाचों भाईयों की पत्नी होगी"।

इस वचन में पाण्डवों के ऊपर बड़ा भारी आरोप है। यहाँ एक श्लोक में पाण्डवों पर बहुत बड़ा दोषारोपण किया गया है—

यथा—

तेषां तु द्रोपदीं दृष्टवा सर्वेषाममिततौजसाम् ।
सम्प्रमथ्येन्द्रियग्रामं प्रादुरासीन्मनोभवः ॥१३॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १९० श्लोक १३,

अर्थ—

द्रौपदी पर दृष्टि पड़ते ही महान् तेजस्वी और ओजस्वी पाचों पान्डवों के इन्द्रियों को मथकर उनके मनों में कामदेव उत्पन्न हो गया।

ये वाक्य किसी घोर पाण्डव द्रोही का ही हो सकता है—

कितना घ्रणित भाव है,। क्या पान्डव वास्तव में ऐसे थे कि— पाचों के पाचों ही एक कन्या को देखकर काम के वश में हो गये, क्या वह इतने गिरे हुए थे, जो युधिष्ठिर को एक स्त्री के ऊपर आपस में फूट का भय हो गया, और युधिष्ठिर स्वयं जो धर्म पुत्र कहे जाते हैं, अपने आपको वश में न रख सकें, अपना विवाह भी

उसी से करने को विवश हो गये, ! मेरे विचार में यह मिथ्या घड़न्त है।

हिड़िम्बा भीमसैन पर मोहित हो गयी थी, वह परम सुन्दरी थी, उसके विषय में स्थान-स्थान पर ये वाक्य आये हैं—

वैशम्पायन उवाच—

अवेक्षमाणस्तस्याश्च हिडिम्बो मानुषं वपुः ।
स्त्रग्दामपूरितशिखं समग्रेन्दुनि भाननम् ॥१३॥
सुभ्रनासाक्षिकेशान्तं सुकुमारनरवत्वचम् ।
सर्वा भरणसंयुक्तं सुसूक्ष्माम्बरवाससम् ॥१४॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १५२ श्लोक १३, १४,

वैशम्पायन जी कहते हैं, कि—तत्पश्चात्, उसने अपनी बहिन के मनुष्योचित्त रूप की ओर दृष्टिपात किया, उसने अपनी चोटी में फुलों के गज़रे लगा रक्खे थे। उसका मुख पूर्ण चन्द्रमा के समान मनोहर जान पड़ता था, उसकी भौंह, नासिका, नेत्र और केशान्त भाग सभी सुन्दर थे। नख और त्वचा बहुत ही सुकुमार थी, उसने अपने अंगों को समस्त आभूषणों से विभूषित कर रक्खा था, तथा शरीर पर अत्यन्त सुन्दर महीन साड़ी शोभा पा रही थी।

उस सुन्दरी को देखकर किसी का भी मन विचलित और डावाँ डोल नहीं हुआ था, और द्रौपदी को देखते ही, अन्यों का तो कहना ही क्या धर्म पुत्र, धर्मावतार युधिष्ठिर का भी धर्म स्थिर न रहा, यह बात सर्वथा असंगत है।

हिडिम्बा की सुन्दरता का एक और भी पुष्ट प्रमाण देखिए—

कुन्ती ने हिडिम्बा को देखकर उससे पूछा—

प्रबुद्धास्ते हिडिम्बाया,
रूपं द्रष्टवातिमानुषम् ।
विस्मिताः पुरुषव्याघ्रा,
बभुवुः प्रथया सह ॥१॥
ततः कुन्ती समीक्ष्यैनां,
विस्मिता रूप सम्पदा ।
उवाच मधुरं वाक्यं,
सान्त्वपूर्वमिदं शनैः ॥२॥
कस्य त्वं सुर गर्भाभे,
का वासि वरवर्णिनि ।
केन कार्येण सम्प्राप्ता,
कुतश्चागमनं तव ॥३॥
यदि वास्य वनस्य त्वं,
देवता यदि वाप्सराः ।
आचक्ष्व मम तत् सर्वं,
किमर्थं चेह तिष्ठसि ॥४॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १५३ श्लोक १, २, ३, ४,

वैशम्पायन जी कहते हैं—जनमेजय ! जागने पर हिडिम्बा का आलौकिक रूप देखकर वे पुरुष सिंह पाण्डव माता कुन्ती के साथ बड़े विस्मय में पड़े, । तदनन्तर कुन्ती ने उसकी रूप सम्पत्ति से चकित हो उसकी ओर देखकर उसे सान्त्वना देते हुए मधुर वाणी में इस प्रकार पूछा—"देवकन्याओं की-सी कान्ति वाली

सुन्दरी ! तुम कौन हो, और किस की कन्या हो, ? तुम किस काम से यहाँ आयी हो, और कहाँ से तुम्हारा शुभागमन हुआ ?

यदि तुम इस वन की देवी अथवा अप्सरा हो तो वह सब मुझे ठीक-ठीक बता दो, साथ ही यह भी कहो कि, किस कार्य के लिए यहां खड़ी हो ?

नोट—यही नहीं, डिडिम्बा के सौन्दर्य के विषय में महाभारत अध्याय १५२ के श्लोक ७, में "पृथुसुश्रोणि नैष" सुन्दरी तथा श्लोक १० में "शोभने" आदि वाक्य आये हैं। अब बताओ ?

ऐसी परमसुन्दरी पर तो युधिष्ठिर का चित्त चलायमान न हुआ और द्रौपदी जिसको श्यामवर्ण होने से कृष्णा भी कहा जाता है, उसके ऊपर आपस में बैर उत्पन्न होने का भी भय हो जाये ?

यह मिथ्या बनावट और पांडवों पर मिथ्या दोषारोपण नहीं है, तो क्या है ?

अर्जुन ने चित्ररथ गन्धर्व से कहा कि—

"यान्तो वेद विदः सर्वे"—हम सब वेदों के जाननेवाले हैं।

वेदों में तो कहीं भी एक स्त्री के एक समय में बहुत से पति होने का विधान नहीं है।

युधिष्ठिर की ओर से कहा गया वचन—

अहं चाप्य निविष्टो वै,
भीमसेनश्च पान्डवः।
पार्थेन विजिता चैषा,
रत्नभूता सुता तव ॥२४॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १९४ श्लोक २४,

पाण्डवों में "मैं और भीमसैन अभी तक अविवाहित हैं" परन्तु आपकी रत्नस्वरूपा कन्या को अर्जुन ने जीता है।

साथ ही युधिष्ठिर का वचन यह भी कहा है—

न मे वागनृतं प्राह,
नाधर्मे धीयते मतिः।
एवं चैव वदत्यम्बा,
मम चैतन्मनोगतम् ॥३०॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १६४ श्लोक ३०,

युधिष्ठिर जी महाराज कहते हैं कि, मेरी वाणी कभी झूठ नहीं बोलती है, और मेरी बुद्धि भी कभी अधर्म में नहीं लगती है, हमारी माता ने भी हमें वेदों के विरुद्ध नहीं वल्कि वेदानुसार ही कार्य करने की आज्ञा दी है, तथा मेरे मन में यही ठीक जंचा है।

एक जगह नहीं महाभारत में अनेकों स्थानों पर इस प्रकार के वचन हैं। जहां पर युधिष्ठिर जी अपने को सत्य व धर्माव-लम्बी घोषित करते हैं।

यथा—

न मे वागनृतं प्राह,
नाधर्मे धीयते मतिः।
वर्तते ही मनो मेऽत्र,
नैषोऽधर्मः कथंचन ॥१३॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १९५ श्लोक १३,

युधिष्ठिर जी महाराज कहते हैं कि मेरी वाणी कभी झूठ नहीं बोलती, और मेरी बुद्धि भी कभी अधर्म में नहीं लगती, परन्तु

इस विवाह में मेरे मन की प्रवृत्ति हो रही है। इसलिए यह किसी प्रकार भी अधर्म नहीं है।

भीमसैन का हिडिम्बा के साथ विवाह पहले ही हो चुका था और भीमसैन द्वारा उससे एक पुत्र भी हो चुका था, जिसका नाम 'घटोत्कच' था, ऐसी स्थिति में युधिष्ठिर जी ऐसा झूठ कैसे बोल सकते थे। कि "मैं और भीमसैन दोनों अविवाहित हैं"।

व्यास जी के आगमन और उनके नाम से दो वे-सिर-पैर की कथाओं का कहलवाना एक कथा में, एक युवती का रोना उसके आंसुओं की वूदों से कमल बनना, तो अद्भुत गपोड़ा ही है। साथ ही इन्द्र का इस खोज में आना कि, कमल कहां से बहकर आ रहे हैं, यह भी अनोखी गपोड़ी ही है। कमल ऐसी वस्तु हैं जो इन्द्र ने कभी न देखी हो और कमाल की वात तो यह है कि, इन्द्र को भी कोई काम नहीं था, वे वह उन कमलों की तलाश में व्यर्थ ही समय नष्ट करता फिरता था।

और फिर विचार करो ?

वह रोने वाली क्यों रोती थी ? क्या चार इन्द्र उसकी तृप्ति नही कर सकते थे। जो पाचवें के लिए वह रोती फिरती थी।

क्या शिवजी ने पांच इन्द्रों को दण्ड देने के लिए ही यह सब प्रपंच रचा था कि–

एक स्त्री को रोने के लिए विठा दे उसके साथ इन्द्र आये और शिवजी की काम क्रीड़ा देखकर वह क्रुद्ध हों, तब शिवजी उनको भूमि पर जन्म लेने और एक स्त्री के पांच पतियों को पति वनने का शाप दे।

इस गपोड़ी को कमजोर समझा गया तो, दूसरा गपोड़ा बनाया गया कि—

एक ऋषि कन्या को वर नहीं मिलता था, उसने शिवजी को अपनी तपस्या से प्रसन्न कर लिया।

शिवजी ने तो प्रसन्न होकर कहा—कि मांग क्या मांगती है?

उसके मुह से घबराहट में पांच बार निकल गया, कि मुझको पति दीजिये। तुरन्त शिवजी ने कह दिया कि जा तेरे पांच पति होंगे, क्या शिवजी उसके मनोभाव को नहीं जानते थे। या समझे नहीं—कि यह पांच पति नहीं मांगती है, इसको एक ही वर की इच्छा है।

यदि इतना भी पता उनको नहीं लग सकता था, तो शिव अन्तंयामी क्या खाक थे।

फिर कन्या ने हाथ जोड़कर प्रार्थना भी की, कि—मुझको एक ही पति चाहिए, पांच नहीं, तो शिव ने कह दिया कि, होंगे तो पांच ही क्योंकि—हमने पांच पति होने का वरदान दे दिया है! वाह जी वाह! पांच पुत्र होने का वरदान तो सबकी समझ में आ सकता है। पर पांच पति होने का अनुपम और अलौकिक ही वरदान रहा।

कन्या के अनुनय विनय करने पर शिवजी ने कह दिया कि जा अच्छा इस जन्म (शरीर) में नहीं दूसरे जन्म में होंगे।

भाई! कमाल है!! रियायत भी क्या अद्‌भुत दे दी !!!

किसी को फांसी का हुक्म हुआ, उसने दया की प्रार्थना की तो, महाराजा ने दया करके छूट दे दी कि—फांसी आज नहीं कल

होगी। आज हुई या कल बात तो वही रही। भली रियायत शिव-जी महाराज ने की। इससे शिवजी पर कई दोष आते हैं—

१. शिवजी अन्तर्यामी नहीं थे, जो कन्या के मनोभावों को भी न समझे कि—मन में कामना, इसको एक पति की है या पांच पतियों की।

२. शिवजी लोक व्यवहार से भी सर्वथा शून्य थे, सामान्य मनुष्य भी यह अनुमान साधारण रीति से लगा सकता हैं कि—कोई कन्या पांच पतियों की कामना नही कर सकती है।

फिर जो ईशाराधना करने वाली धर्मात्मा देवी है, क्या वह कभी भूलकर भी एक से अधिक पतियों की चाहना कर सकती है ? कदापि नहीं।

यदि वह पापात्मा थी, जो एक पति से सन्तुष्ट नहीं हो सकती थी, तो शिवजी ने उसको वरदान ही क्यों दिया ? क्या शिवजी दुराचारी पुरुषों और दुराचारिणी स्त्रियों को भी दुराचार का वर-दान देते थे।

यदि कहा जाय कि—हां ! तो ऐसे शिव कहलाने वाले से तो अशिव ही अच्छे !

३. सर्वथा वेद विरुद्ध वरदान देना यह प्रकट करता है कि या तो वह वेदों को जानते नहीं थे। या वेदों को मानते नहीं थे।

४. वेद और वैदिक धर्म को जानना तो दूर की बात सामान्य धर्म को भी नहीं जानते थे।

उनसे तो अधिक धर्म और लोक व्यवहार को महाराजा द्रुपद भी जानते थे, जिन्होंने कहा कि

एकस्य बह्व्यो विहिता,
महिष्यः कुरुनन्दन ।
नैकस्या बहवः पुंसः,
श्रूयन्ते पतयः क्वचित् ॥२७॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १९४ श्लोक २७,

एक पुरुष या एक राजा की कई राज पत्नियां हों, ऐसा विधान तो है, पर एक स्त्री के अनेक पति हों ऐसा तो बिल्कुल सुना भी नहीं गया ।

द्रुपद ने आगे भी एक स्त्री के अनेक पति का होना लोक और वेद दोनों के विरुद्ध बताया !

देखिए—

लोक वेद विरुद्धं त्वं,
ना धर्मं धर्मविच्छुचिः ।
कर्तुमर्हसि कौन्तेय,
कस्मात् ते बुद्धिरीद्रशी ॥२८॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक २८,

तुम धर्म के ज्ञाता और पवित्र हो, अतः तुम्हें लोक और वेद के विरुद्ध यह अधर्म नहीं करना चाहिये, हे कुन्ती के पुत्र ! तुम्हारी बुद्धि ऐसी क्यों हो रही है ?

साधारण मनुष्य भी यह जान सकता है कि, सर्व कल्याण-कारी शिवजी ऐसा वरदान कभी नहीं दे सकते हैं ।

झूठी कहानी वनाने वाले को इन गहराइयों में जाने का कुछ प्रयोजन नहीं हैं । उसको तो येन-केन प्रकारेण द्रौपदी के पांच पति

बनाने से मतलब है। वह किसी तुक से बने अथवा बिना तुक बने झूठी बात का भी कहीं न कहीं प्रभाव पड़ता ही हैं, थोड़ा बहुत लोग असम्भव बातों को भी मानने लगते हैं। और अनुचित से अनुचित बातों को भी उचित समझ लेते हैं। कथावाचक और उपन्यासकार तो वह ही अधिक सफल होता है, जो अनहोनी, अलौकिक, बातों को अतिरंजित करके कहे या लिखें।

द्रौपदी के पांच पति होने की कथा को स्पष्ट करने के लिए महर्षि वेदव्यास के नाम से जहां-जहां यह बेतुकी कहानियां बनाई वहां इस झूठ के किले को बनवाने में कुछ दरारें भी रह गयी, जिससे यह झूठा दुर्ग धड़ाम से गिर गया, एक बड़ी भारी दरार उसमें यह रही कि—

केवल द्रुपद ने ही एक स्त्री के पांच पति होने को लोक और वेद के विरुद्ध नहीं बताया, व्यास जी के मुख से भी कहानीकार ने यह ही कहलवाया कि—

अस्मिन् धर्मे विप्रलब्धे,
लोक वेद विरोध के।
यस्य-यस्य मतं यद् यच्छ्रोतु,
मिच्छामि तस्य तत् ॥६॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक ६,

व्यास जी ने कहा कि अत्यन्त गहन होने के कारण शास्त्रीय आवरण के द्वारा ढके हुए इस लोक-वेद विरुद्ध धर्म के सम्बन्ध में तुममें से जिसका-जिसका जो-जो मत हो, उसे मैं सुनना चाहता हूं। अर्थात् व्यास जी भी उसको लोक और वेद दोनों के विरुद्ध कहते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि जिस कार्य को व्यासजी स्वयं लोक के भी विरुद्ध मानते हैं, और वेद के भी, उसके सम्बन्ध में अन्यों के मत क्यों पूछते हैं ?

और जब राजा द्रुपद ने भी वही बात कही जो व्यास जी ने कही थी देखिये—

अधर्मोऽयं मम मतो,
विरुद्धो लोकवेदयोः ।
न ह्येका विद्यते पत्नी,
बहूनां द्विजसत्तम ॥७॥
न चाप्याचरितं पुर्वै
रयं, धर्मो महात्मभिः ।
न चाप्यधर्मो विद्वद्भि—,
श्चरितव्यः कथंचन ॥८॥
ततोऽहं न करोम्येनं,
व्यवसायं क्रियां प्रति ।
धर्मः सदैव संदिग्धः
प्रतिभाति हि मे त्वयम् ॥९॥

धृष्टधुम्न—

यवीयसः कथं भार्यां,
ज्येष्ठो भ्राता द्विजर्षभ ।

ब्रह्मन् समभिवर्तेत,
सवृत्तः संस्तपोधन ॥१०॥
न तु धर्मस्य सूक्ष्मत्वाद्,
गति विद्म कथंचन ।
अधर्मो धर्म इति वा,
व्यवसायो न शक्यते ॥११॥
कर्तुमस्मद्विधैर्ब्रह्मं
स्ततोऽयं न व्यवस्यते ।
पञ्चानां महिषी कृष्णा,
भवत्विति कथंचन ॥१२॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १९५, श्लोक ७ से १२,

भावार्थ

व्यास जी से द्रुपद जी वोले कि हे द्विज श्रेष्ठ ! मेरी राय में तो यह अधर्म ही है, क्योंकि यह लोक और वेद दोनों के विरुद्ध है। वहुत से पुरुषों की पत्नी एक ही हो ऐसा व्यवहार कहीं भी नहीं है।

पूर्ववर्ती महात्मा पुरुषों ने भी ऐसे धर्म का आचरण नहीं किया है। और विद्वान पुरुषों को किसी प्रकार भी अधर्म का आचरण नहीं करना चाहिये।

इसलिए मैं इस धर्म विरोधी आचार को काम में नहीं लाना चाहता। मुझे तो इस कार्य के धर्मसंगत होने में सदा ही संदेह जान पड़ता है।

धृष्टधुम्न वोले—द्विज श्रेष्ठ ! आप ब्राह्मण हैं। तपोधन हैं, आप ही बताइये, वड़ा भाई सदाचारी होते हुए अपने छोटे भाई की स्त्री के साथ समागम कैसे कर सकता है ?

धर्म का स्वरूप अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण हम उसकी गति को सर्वथा नहीं जानते, अतः यह कार्य अधर्म है या धर्म, इसका निश्चय करना हम जैसे लोगों के लिए असम्भव है। ब्रह्मन् ! इसलिए हम किसी तरह भी ऐसी सम्मति नहीं दे सकते कि—राजकुमारी कृष्णा पांच पुरुषों की धर्म पत्नी हो।

जब व्यास जी भी इस कर्म को लोक और वेद के विरुद्ध कहते हैं। और द्रुपद आदि भी, इसको लोक-वेद और सदाचार के विरुद्ध अधर्म और अकर्त्तव्य बताते हैं। तब व्यास जी युधिष्ठिर के लोक-वेद विरुद्ध विचार को पुष्ट क्यों करने लगे ?

क्या इसलिए कि युधिष्ठिर उनके सगे पौत्र हैं या कि आगे उनके सम्राट होने की सम्भावना है, इसलिए उनकी अनुचित राय को भी झूंठी कहानियां बनाकर उचित बना दिया ?

सब समझदार व्यक्ति मानेंगे कि—व्यास जी ऐसा कदापि नहीं कर सकते थे। अब युधिष्ठिर की कही हुई जो दो कहानियां पुराने इतिहास के नाम पर बनाई गयी है, उनको पढ़िये ! और उनके सत्य-असत्य होने पर विचार करिये।

युधिष्ठिर उवाच—

श्रूयते हि पुराणेऽपि,
जटिला नाम गौतमी।
ऋषीनध्यासितवती,
सप्तधर्मभृतां वरा ॥१४॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९५ श्लोक १४,

युधिष्ठिर जी कहते हैं कि—पुराणों में भी सुना है कि—

गौतम गौत्र की जटिला नाम वाली एक कन्या ने सात ऋषियों के साथ विवाह किया था।

पुराणों के बनाने वाले व्यास जी को इस जटिला के जटिल विवाह का पता नहीं था, युधिष्ठिर जी को पता लग गया !

अच्छा होता कि—सारे पुराण युधिष्ठिर जी के नाम से ही बनाये जाते। क्योंकि वह व्यास जी से भी अधिक पुराणों को जानने वाले थे।

दूसरी कहानी घड़ी गयी, वह भी देखिये—

युधिष्ठिर उवाच—

तथैव मुनिजा वार्क्षी,
तपोभिर्भावितात्मनः।
संगताभूद् दश भ्रातृन्,
एकनाम्नः प्रचेतसः ॥१५॥

महाभारत आदिपर्व अध्याय १९५, श्लोक १५,

अर्थात—इसी प्रकार कण्डु मुनि की पुत्री वार्क्षी ने तपस्या से पवित्र हुए अन्तःकरण वाले दश प्रचेताओं से एक ही साथ विवाह किया था। जो कि आपस में भाई-भाई ही थे !

यह वार्क्षी कौन थी ?

आप इस कथा का वह विष्णु पुराण का अंश ही पढ़िये जहां पर यह कथा बनाई गयी है।

नोट :—यह विष्णु पुराण अंश १ का १५ वां अध्याय का भाग ही है इसको अगर सम्पूर्ण लिखा जाये तो यह पुस्तक नहीं बल्कि अच्छा लम्बा-चौड़ा पोथा तैयार हो जावेगा। अतः यहां पर जो बहुत ही

आवश्यक हैं, वह श्लोक दिये जाते हैं। हिन्दी सारांश पूरा ही दिया जायेगा।

यथा—

मारिषा नाम नाम्नैषा,
वृक्षाणामिति निर्मिता।
भार्या वोऽस्तु महाभागा,
ध्रुवं वंशविवर्द्धिनी ॥८॥

विष्णु पुराण अंश १ अध्याय १५, श्लोक ८,

वृक्षों की यह कन्या वार्क्षी मारिषा नाम से प्रसिद्ध है, यह महाभागा इसलिए ही उत्पन्न की गयी है कि, निश्चय ही तुम्हारे वंश को बढ़ाने वाली तुहारी भार्या हो।

क्षोभितः स तयासार्द्धं,
वर्षाणामधिकं शतम्।
अतिष्ठन्मन्दरद्रोण्यां,
विषयासक्त मानसः ॥१३॥

विष्णु पुराण अंश १ अध्याय १५, श्लोक १३,

उसके द्वारा क्षुब्ध होकर वे सौ वर्ष से भी अधिक तक "विषयासक्त" चित्त से मन्दराचल की कन्दरा में रहे।

सप्तोत्तराण्यतीतानि,
नव वर्षशतानि ते।
मासाश्च षट् तथैवान्य--,
त्समतीतं दिनत्रयम् ॥३१॥

विष्णु पुराण अंश १ अध्याय १५, श्लोक ३२,

अब तक नौ सौ सात वर्ष छः महीने तथा तीन दिन और भी बीत चुके हैं।

वृक्षाग्रगर्भसम्भूता,
मारिषाख्या वरानना।
तां प्रदास्यन्ति वोवृक्षाः,
कोप एष प्रशाम्यताम् ॥५०॥
कण्डोरपत्यमेवं सा,
वृक्षेभ्यश्च समुद्गता।
ममापत्यं तथा वायोः,
प्रम्लोचातनया च सा ॥५१॥

विष्णु पुराण अंश १ अध्याय १५ श्लोक ५०, ५१,

वृक्षाग्र से उत्पन्न हुई वह मारिषा नाम की सुमुखी कन्या तुम्हें वृक्षगण समर्पण करेंगे, अतः अब यह क्रोध शान्त करो ॥५०॥

इस प्रकार वृक्षों से उत्पन्न हुई वह कन्या प्रम्लोचा की पुत्री है, तथा कण्डु मुनि की, मेरी और वायु की भी सन्तान है ॥५१॥

यह सोम (चन्द्रमा) का वचन है।

भविष्यन्ति महावीर्या,
एकस्मिन्नेव जन्मनि।
प्रख्यातोदारकर्माणो,
भवत्याः पतयो दश ॥६८॥
दशभ्यस्तु प्रचेतोभ्यो,
मारिषायां प्रजापतिः।
जज्ञे दक्षो महाभागो,
यः पूर्वं ब्रह्मणोऽभवत् ॥७४॥

विष्णु पुराण अंश १ अध्याय १५, श्लोक ६८, ७४,

तेरे एक ही जन्म में बड़े पराक्रमी और विख्यात कर्मवीर दश पति होंगे ॥६८॥

उन दशों प्रचेताओं से मारिषा के महाभाग दक्ष प्रजापति का जन्म हुआ जो पहले ब्रह्मा जी से उत्पन्न हुए थे।

सारांश :—ऋषि (प्रचेता) घोर तपस्या कर रहे थे इन्द्र ने उनकी तपस्या को भंग करने के लिए अम्लोचा अप्सरा को भेजा उसने ऋषि कण्डु को अपने प्रेम बन्धन में बांध लिया—

प्रचेता कौन थे ?

इनके लिए आप अगले पृष्ठों पर ब्रह्मा जी की वंशावली देखिये ! एवं पूर्ण आनन्द प्राप्त करना चाहें तो आप विष्णु पुराण पढ़ो, ऐसे गपोड़े देखने को मिलेंगे जिनके न सिर होगा न पैर !

नोट :—विष्णु पुराण के अनुसार दक्ष प्रजापति ने अनेकों स्त्री पुरुषों की उत्पत्ति की जिनसे सृष्टि का आरम्भ हुआ।

किसी ने ठीक ही कहा है—जिन पर पुराणों की बातें बिलकुल खरी उतरती है—

गप्पी से गप्पी कहे,
छोटी गप क्या चीज।
पांच हाथ की काकड़ी,
बीस हाथ का बीज॥

वृक्षों की भी लड़कियां होनें लगी, और वृक्षों की लड़की वृक्ष के साथ विवाही हुई बताई जाती तो कहीं कुछ तुक तो लगती यहां वृक्षों की लड़की मनुष्यों, ऋषियों के साथ विवाही गयी।

ब्रह्मा जी की वंशावली

ब्रह्मा
स्वायम्भुवमनु
प्रियव्रत
उत्तानपाद
ध्रुव
शिष्टि
भव्य
शम्भु
रिपुञ्जय
विप्र
वृकल
रिपु
वृकतेजा
चाक्षुष

मनु
(छठे मनवन्तर के अधिपति)
अभिमन्यु
पुरु
शतद्युम्न
कुरु
तपस्वी
सत्यवान
शुचि
अग्निष्टोम
अतिरात्र
सुद्युम्न
सुमना
ख्याति
अंग
ऋतु
अंगिरा
शिवि
वेन
निषाद
(वायें हाथ के मन्थन द्वारा)
वैन्य
(दायें हाथ के मन्थन द्वारा)
अन्तर्द्धान
वादी
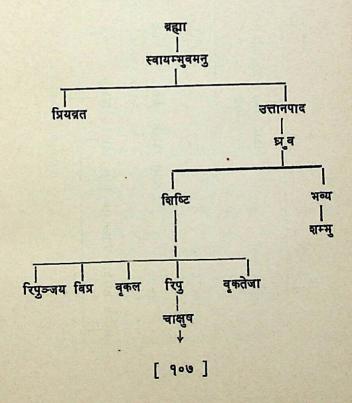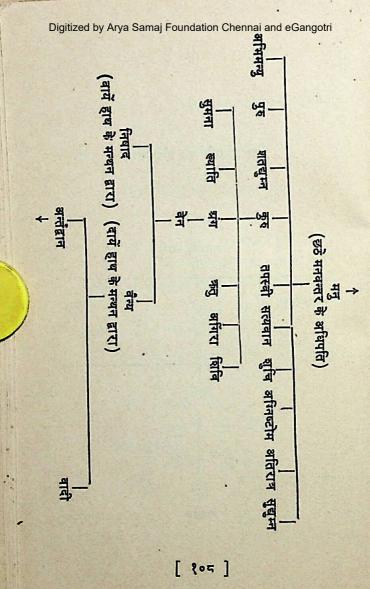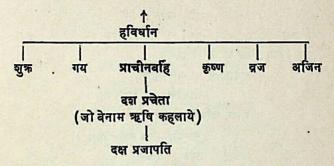
चे खुश चिरा न बूदी।
छप्पर से भैंस कूदी॥

एक तेली ने जाट से कहा--

"जाट रे जाट, तेरे सर पर खाट"

उत्तर में जाट ने कहा कि--

"तेली रे तेली, तेरे सिर पर कोल्हू"

तेली ने कहा कि—जाट और खाट की तो तुक लगी, परन्तु तेली और कोल्हू की कोई तुक नहीं बैठी, ।

इस पर जाट महाराज ने कहा कि—तुक नहीं लगी तो क्या हुआ ? "बोझ से तो मरेगा"

वही हाल पुराणों के रचियताओं ने किया है। न कोई ताल-मेल न कुछ एक से एक बढ़कर बेतुकी हाँकी गयी है। जिसका न सिर है ना पैर। जैसे वार्क्षी वृक्षों में से उत्पन्न हुई, ऐसे ही कोई जटिला, जटाओं में से बना ली होगी। यह तो जादूगर का पिटारा है। क्या पता इसमें से क्या-क्या निकल आये जैसे श्री व्यास जी

को कहानीकार ने ला खड़ा किया। ऐसे ही श्री नारद जी को भी बुला दिया, और नारद जी द्वारा पांचों पतियों का समय वंटवा दिया। महाभारत में देखिये—

एवमुक्ता महात्मानो,
नारदेन महर्षिणा।
समयं चक्रिरे राजं
स्तेऽन्यो,—न्य वशमागताः ॥
समक्षं तस्य देवर्षे,
नारदस्यामितौजसः ॥२८॥
एकैकस्य ग्रहे कृष्णा वसेद् वर्षमकल्मषा
द्रौपद्या नः सहासीनान्
अन्योन्यं योऽभिदर्शयेत्।
स नो द्वादश वर्षाणि,
बृह्मचारी बने वसेत् ॥२९॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय २११ श्लोक २८,२९,

अर्थात् वैशम्पायन जी कहते हैं—जनमेजय ! देवर्षि नारद के ऐसा कहने पर एक दूसरे के आधीन रहने वाले उन अमित तेजस्वी महात्मा पाण्डवों ने देवर्षि के सामने ही यह नियम बनाया, कि हममें से प्रत्येक के घर में पाप रहित द्रौपदी एक-एक वर्ष निवास करे। द्रौपदी के साथ एकान्त में बैठे हुए हममें से एक भाई को यदि दूसरा देख ले, तो वह बारह वर्षों तक ब्रह्मचर्य पूर्वक बन में निवास करे !

अब आप देखिये ! यहां पर एक झूठ के साथ अनेक झूठ बनाने पड़ रहे हैं। यह कैसा बेहूदा नियम है !

सम्भोग करते हुए कोई किसी को न देखे यह तो नियम समझ में आता है, समागम और गर्भाधान का दिन में करना निषिद्ध है, उसका समय रात्रि है, रात्रि में और वह भी एकान्त में अपने-अपने पृथक भवनों में किसी के देखने का प्रश्न ही नहीं उठता है। रही साथ बैठे देखने की बात ! सो इसमें बुराई ही कुछ नहीं है, छोटे भाई, बड़े—भाई और भाभी को साथ-साथ बैठे सर्वत्र और सदा सभी देखते हैं। श्री राम जी के साथ सीता जी को पूरे तेरह वर्ष तक लक्ष्मण जी इकट्ठे बैठे हुए नित्य देखते रहे। इसमें कुछ भी पाप और दोष नहीं है।

बड़ा भाई भी छोटे भाई और छोटे भाई की पत्नीको साथ साथ बैठे देख ले तो क्या पाप हो गया ?

वास्तविकता यह है कि—ऐसा नियम बनाने की कुछ भी आवश्यकता नहीं थी, केवल कहानीकार को पांच पतियों वाली झूँठी कहानी को पुष्ट करने के लिए अनेकानेक झूंठी बातें बनानी पड़ रही हैं।

आगे फिर कहानीकार कहानी को क्या मोड़ देता है, देखिये ध्यान से पढ़िये—यहां पर महाभारत के मूल श्लोकों का अर्थ ही दिया जाता है। जो बहुत आवश्यक हैं वह श्लोक भी दिये जावेंगे। अगर हम पूरा मूल सहित लिखना आरम्भ करें तो यह पुस्तक न रहकर पूरा महाभारत ही तैयार हो जावेगा। अतः उन श्लोकों का भाषार्थ ही पढ़िये—वैशम्पायन जी कहते है—जनमेजय ! इस प्रकार नियम बना कर पाण्डव लोग वहां रहने लगे, वे अपने अस्त्र शस्त्रों के प्रताप से दूसरे राजाओं को आधीन करते रहते थे।

कृष्णा मनुष्यों में सिंह के समान वीर और अमित तेजस्वी उन पांचों पाण्डवों की आज्ञा के आधीन रहती थी ।

पाण्डव द्रौपदी के साथ और द्रौपदी उन पांचों वीर पतियों के साथ ठीक तरह अत्यन्त प्रसन्न रहती थी, जैसे नागों के रहने से भोगवती पुरी परम शोभायुक्त होती है । महात्मा पाण्डवों के धर्मानुसार वर्त्ताव करने के कारण समस्त कुरु वंशी निर्दोष एवं सुखी रह कर निरन्तर उन्नति करने लगे ।

महाराज ! तदनन्तर दीर्घकाल के पश्चात एक दिन कुछ चोरों ने किसी ब्राह्मण की गौएँ चुरा ली ।

अपने गोधन का अपहरण होता देख ब्राह्मण अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा और खाण्डव प्रस्थ में आकर उसने उच्चस्वर से पाण्डवों को पुकारा कि हे पाण्डवों ! हमारे गांव से कुछ नीच, क्रूर और पापमात्मा चोर जवरदस्ती गोधन चुराकर लिये जा रहे हैं, उसकी रक्षा के लिए दौड़ो ।

आज एक शान्त स्वभाव ब्राह्मण का हविष्य कौवे लूटकर खा रहे हैं, नीच सिआर सिंह की सूनी गुफा को रौंद रहा है, जो राजा-प्रजा की आय का छटा भाग करके कर रूप में वसूल करता है, किन्तु प्रजा की रक्षा के लिए कोई व्यवस्था नहीं करता, उसे सम्पूर्ण लोगों में पूर्ण पापाचारी कहा गया है । अतः वह ब्राह्मण बोला कि मेरा धन चोर लिये जा रहे हैं, मेरी गौवों के न रहने पर दुग्ध आदि हविष्य के अभाव से धर्म और अर्थ का लोप हो रहा है । तथा मैं यहां आकर रो रहा हूं । पाण्डवों ! (चोरों को दण्ड देने के लिए) अस्त्र धारण करो । वह ब्राह्मण निकट आकर बहुत रो रहा था, पान्डु पुत्र कुन्ती नन्दन धनंजय ने उसकी कही हुई

सारी बातें सुनी और सुनकर उन महाबाहु ने उस ब्राह्मण से कहा "डरो मत" महात्मा पाण्डवों के अस्त्र-शस्त्र जहां रक्खे गये थे, वहीं धर्मराज युधिष्ठिर कृष्णा के साथ एकान्त में बैठे थे, अत:पाण्डु पुत्र अर्जुन न तो घर के अन्दर प्रवेश कर सकते थे, और न खाली हाथ चोरों का पीछा कर सकते थे इधर उस आर्त ब्राह्मण की बातें उन्हें बार-बार शस्त्र ले आने को प्रेरित कर रही थी। जब वह अधिक रोने-चिल्लाने लगा, तब अर्जुन ने दुखी होकर सोचा। इस तपस्वी ब्राह्मण के गोधन का अपहरण हो रहा है। अतः ऐसे समय में इसके आँसू पोछना मेरा कर्त्तव्य है, यही मेरा निश्चय है। यदि में राज द्वार पर रोते हुए इस ब्राह्मण की रक्षा आज नहीं करूंगा तो, महाराज युधिष्ठिर की उपेक्षा जनित महान् अधर्म का भागी होना पड़ेगा। इसके सिवाय लोक में यह बात फैल जायेगी कि हम सब लोग किसी आर्त की रक्षा रूप धर्म के पालन में श्रद्धा न ही रखते। साथ ही हमें अधर्म भी प्राप्त होगा। यदि राजा का अनादर करके मैं घर के भीतर चला जाऊं, तो महाराज अजात शत्रु के प्रति मेरी प्रतिज्ञा मिथ्या होगी राजा की उपस्थिति में घर के भीतर प्रवेश करने पर मुझको वन में निवास करना होगा। इसमें महा-राज के तिरस्कार के सिवा और सारी बातें तुच्छ होने के कारण उपेक्षणीय है। चाहे राजा के तिरस्कार से मुझे नियम भंग का महान दोष प्राप्त हो अथवा वन में ही मेरी मृत्यु हो जाये। तथापि शरीर को नष्ट करके भी गौ-ब्राह्मण, रक्षा रूप धर्म का पालन ही श्रेष्ठ है। ऐसा निश्चय करके कुन्तीकुमार धनञ्जय ने राजा से पूछ कर घर के भीतर प्रवेश करके धनुष ले लिया, और (बाहर आकर) प्रसन्नता पूर्वक ब्राह्मण से कहा—विप्रवर!

शीघ्र आइये जब तक दूसरों के धन हड़पने की इच्छा वाले वे क्षुद्र चोर दूर नहीं चले जाते, तभी तक हम दोनों एक साथ वहां पहुंच जायें, मैं अभी आपका गोधन चोरों के हाथसे छीन कर आपको लौटा देता हूं। ऐसा कहकर महाबाहु। अर्जुन ने धनुष धारण करके ध्वजायुक्त रथ पर आरूढ़ हो उन चोरों का पीछा किया और बाणों से चोरों का विनाश करके सारा गोधन छीन लिया। फिर ब्राह्मण को वह सारा गोधन देकर प्रसन्न करके अनुपम यश के भागी पाण्डु पुत्र सव्यसावी वीर धनञ्जय पुनः अपने नगर में लौट आये, वहां आकर उन्होंने समस्त गुरुजनों को प्रणाम किया। और उन सभी गुरुजनों ने उनकी बड़ी प्रशंसा की एवं अभिनन्दन किया। इसके बाद अर्जुन ने धर्मराज से कहा कि—प्रभो मैंने आपको द्रौपदी के साथ देखकर पहले निश्चित नियमों को भंग किया है, अतः आप इसके लिए मुझे प्रायश्चित करने की आज्ञा दीजिये। मैं वनवास को जाऊंगा, हम लोगों में यह शर्त हो चुकी है। अर्जुन के मुख से सहसा यह अप्रिय वचन सुनकर धर्मराज शोकातुर होकर लड़खड़ाती हुई वाणी में बोले "ऐसा क्यों करते हो" इसके बाद राजा युधिष्ठिर धर्म मर्यादा से कभी च्युत न होने वाले अपने भाई गुड़ाकेश धनञ्जय से दीन होकर बोले। 'अनघ' ! यदि तुम मुझको प्रमाण मानते हो तो मेरी यह बात सुनों, वीर वर ! तुमने घर के भीतर प्रवेश करके तो मेरा प्रिय कार्य कियाहै। अतः उसके लिए मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ, क्योंकि मेरे हृदय में वह अप्रिय नहीं है। यदि बड़ा भाई घर में स्त्री के साथ बैठा हो तो छोटे भाई का वहां जाना उसके धर्म का नाश करने वाला है। अतः महाबाहो मेरी बात मानो, वनवास का विचार त्याग दो, न तो

तुम्हारे धर्म का लोप हुआ है। और न तुम्हारे द्वारा मेरा तिरस्कार ही किया गया है। अर्जुन ने कहा—प्रभो! मैंने आपके ही मुख से सुना है कि, धर्माचरण में कभी बहाने बाजी नहीं करनी चाहिये। अतः मैं सत्य की शपथ खाकर और शस्त्र छूकर कहता हूँ कि सत्य से विचलित नहीं होऊंगा। यशोवर्धन! मुझे आप वनवास के लिए आज्ञा दें मेरा यह निश्चिय है कि, मैं आपकी आज्ञा के विना कोई कार्य नहीं करूंगा। अतः राजा की आज्ञा लेकर अर्जुन ने वनवास की दीक्षा ली और वन में बारह वर्षों तक रहने के लिए वे वहां से चल पड़े। यह पूरी कहानी महाभारत आदि पर्व अध्याय २१२ में लिखी हुई है, इसी अध्याय के बत्तीसवें श्लोक में युधिष्ठिर जी कहते हैं कि—

गुरोरनुप्रवेशो हि,
नोपघातो यवीयसः।
यवीयसोऽनुप्रवेशो,
ज्येष्ठस्य विधि लोपकः ॥३२॥

यदि बड़ा भाई घर में स्त्री के साथ बैठा हो, तो छोटे भाई का वहां जाना दोष की बात नहीं है। परन्तु छोटा भाई घर में हो तो बड़े भाई का वहां जाना उसके धर्म का नाश करने वाला है।

नोट—यहां तक की कहानी पर ही विचार कर लीजिये इसी में अनेक बेतुकी बातें दिखाई देंगी।

१. जहां से चोर गौओं को चुराकर ले गये थे, वहां से खाण्डव प्रस्थ राजधानी तक कोई पुलिस का थाना नहीं मिला।

२. खाण्डव प्रस्थ राजधानी में भी कोई पुलिस का थाना

नहीं था, आपत्ति में फंसने पर दुखिया को सीधा पाँडवों के पास ही आना पड़ता था।

३. पांडव महाराजों के पास भी कोई पुलिस न थी। और न कोई सेना या सिपाही आदि थे, जिनको गौवें छुड़ाने के लिए भेजा जा सकता था, हर जगह हर काम को इन्हीं को जाना पड़ता था।

४. धनुष-बाण आदि भी अर्जुन आदि के पास नहीं थे, वे निहत्थे फिरते रहते थे।

५. रनिवास के बाहर पुरुषों के रहने के जो स्थान होंगे उनमें धनुष आदि नहीं रक्खे जाते थे, उनके रखने का स्थान भी रनिवास में ही था।

६. पाँडवों का घर इतना छोटा था कि उसमें केवल एक ही कमरा था, उसी कोठरी में पति पत्नी दोनों ही सो रहते थे, उसी में हथियार रक्खे जाते थे।

७. वह कोठरी भी केवल उसी को मिलती थी, जिसकी बारी द्रौपदी के पास रहने को हो, शेष चार, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव कहीं बाहर पड़कर अपने दिन काट लेते होंगे। क्योंकि यदि उनके लिए रहने के लिए स्थान पृथक होते तो अपने-अपने हथियार भी वे अपने-अपने स्थानों में रख लेते।

८. चोर भी बड़े सज्जन अथवा महामूढ़ थे। कि गौवों वाला ब्राह्मण अपने गाँव से चलकर राजधानी में आया वहां कुछ देर चिल्लाता रहा, फिर अर्जुन के सम्मुख जो समस्यायें थी, अर्जुन ने उन पर विचार किया, फिर घर में जाकर धनुष लिया, कवच पहना, रथ जुड़वाया, और जब तक अर्जुन वहां पहुंचे, तब तक चोर गौवों को लिये वहीं बैठे रहे और ,चले भी तो बहुत धीरे-

धीरे। और राज मार्ग पर ही चलते रहे कि कहीं किसी को ढूंढ़ने या रथ से उतर कर पैदल चलने का कष्ट न करना पड़े। लगता है चोर बहुत ही सीधे या बिल्कुल ही महा वेवकूफ थे।

अर्जुन रथ सहित सीधे उनके पास पहुंच गये, और उन वेचारों ने केवल गौवें ही नहीं दे दी वल्कि अपनी जानें भी अर्पण कर दी !

वाह रे कथा वाचकों ! धन्य हो !!

तुमने तो पाण्डवों के राज्य की सारी महत्ता ही मिट्टी में मिला डाली ! आगे क्या हुआ उस पर भी विचार करो।

अर्जुन ने युधिष्ठिर की बात को नहीं माना, और वारह वर्षों के लिए वन में चले गये ये भी पूरा अनुवाद पढ़िये—वह महाभारत आदि पर्व अध्याय २१३ के आरम्भ से ही है। परन्तु मूल एवं विशेष बात कहने के लिए आपको विशेष बात लिखी जा रही है।

नर श्रेष्ठ अर्जुन ने मार्ग में अनेक रमणीय एवं विचित्र वन, सरोवर नदी, सागर, देश और पुण्य तीर्थ देखे, धीरे-धीरे गंगाद्वार अर्थात् हरिद्वार में पहुंच कर शक्तिशाली पार्थ ने वहीं डेरा डाल दिया।

जनमेजय ! हरिद्वार में अर्जुन का एक अदभुत् कार्य सुनो जो पाँडवों में श्रेष्ठ विशुद्धचित्त धनञ्जय ने किया था।

हे भारत ! जब कुन्ती कुमार और उनके साथी ब्राह्मण लोग गंगाद्वार में ठहर गये, तब उन ब्राह्मणों ने अनेक स्थानों पर अग्नि-होत्र के लिए अग्नि प्रकट की गंगा के तट पर जब अलग-अलग अग्नियां प्रज्वलित हो गयी, और सन्मार्ग में स्थित एवं मन इन्द्रियों को वश में रखने वाले विद्वान ब्राह्मण लोग स्नान करके फूलों के

उपहार चढ़ा कर जब पूर्वोक्त अग्नियों में आहूति दे चुके, तब उन महात्माओं के द्वारा उस गंगाद्वार नामक तीर्थ की शोभा बहुत बढ़ गयी। इस प्रकार विद्वान एवं महात्मा ब्राह्मणों से जब उनका आश्रम भरा-पूरा हो गया, उस समय कुन्ती नन्दन अर्जुन स्नान करने के लिए गंगा में उतरे। अतः हे राजन्! वहां स्नान आदि करके अग्नि होत्र के लिए वे जल से निकलना ही चाहते थे कि नागराज की पुत्री उलूपी ने उनके प्रति आसक्त हो पानी के भीतर से ही महाबाहु अर्जुन को खीच लिया। नागराज के परम सुन्दर भवन में पहुंच कर पाण्डुनन्दन अर्जुन ने एकाग्र चित्त होकर देखा तो वहां अग्नि प्रज्वलित हो रही थी, उसी समय कुन्ती पुत्र धनञ्जय ने निर्भीक होकर उसी अग्नि में अपना अग्नि-होत्र कार्य सम्पन्न किया, इससे अग्नि देव बहुत प्रसन्न हुए। पश्चात उलूपी का परिचय पूछा।

उसने कहा कि ऐरावत नाग के कुल में कौरव्य नामक नाग उत्पन्न हुए में उन्हीं की पुत्री नागिन हूं, मेरा नाम उलूपी है। मैंने जब आपको स्नान करते देखा था तो मैं तभी काम वेदना से मूर्च्छित हो गयी थी। हे निष्पाप कुरुनन्दन! मैं आपके ही लिए काम देव के ताप से जली जा रही हूं। मैंने आज तक आपके सिवाय अन्य किसी को अपना हृदय अर्पण नहीं किया। अतः मुझे आनन्दित करो।

अर्जुन बोले—

हे प्रिये यह मेरा ब्रह्मचर्य व्रत का समय है। तो भी मैं आपको आनन्दित करना चाहता हूं।

उलूपी बोली—हे नाथ आज में आपकी सेवा में आयी

हूं, हे कुन्ती कुमार आप तो प्रतिदिन न जाने कितने दीनों और अनाथों की रक्षा करते हैं। अतः मेरी भी रक्षा करिये।

हे जनमेजय ! नागराज की कन्या उलूपी के ऐसा कहने पर कुन्ती कुमार अर्जुन ने धर्म को ही सामने रखकर सब कार्य पूर्ण किया, वहीं उलूपी के साथ रात्रि व्यतीत की' सुबह होते ही वह हरिद्वार में पहुंच गया। और उलूपी ने अर्जुन को यह वर दिया आप जग में सर्वत्र अज्ञेय होंगे सभी जल चर आपके वश में रहेंगे। इसमें संशय नहीं है। इस प्रकार अर्जुन ने उलूपी के गर्भ से अत्यन्त मनोहर तथा महान बल पराक्रम से सम्पन्न इरावान् नामक महा-भाग पुत्र उत्पन्न किया।

"लीजिये ! हो गया ब्रह्मचर्य व्रत का पालन"

पर भाई लिखने वालों ने भी कमाल किया उसने पाँडवों को बदनाम करने की कोई कमी शेष नहीं रक्खी मैं कुछ मूल नीचे देता हूं पढ़िये—

शरणं च प्रपन्नास्मि,
त्वामद्य पुरुषोत्तम।
दीनाननाथान् कौन्तेय,
परिरक्षासि नित्यशः ॥३१॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय २१३ श्लोक ३१,

इस श्लोक में कहा कि हे पुरुषोत्तम !

आज मैं आपकी शरण में आयी हूं, कुन्ती कुमार आप प्रति दिन न जाने कितने दीनों और अनाथों की रक्षा करते हैं। और अर्जुन ने काम पीड़ित बाणों से उसकी अच्छी तरह से रक्षा की एक-आध बार नहीं अगले श्लोक ३४ को पढ़ने पर पता लगता है

कि पूरी रात्रि वहीं व्यतीत करके उलूपी की अच्छी तरह से रक्षा की, और धर्म को सामने रखकर की, अतः उसे वह अधर्म मानते ही नहीं थे। ऐसा महाभारत आदि पर्व में ही अध्याय २१३ श्लोक ३३ में पढ़ने पर पता लगता है।

नोट—इसका मतलब तो यह है कि उलूपी जानती थी की ये कुंती कुमार ऐसी रक्षा प्रति दिन ही करते रहते हैं। ब्रह्मचर्य व्रत्त है, या विशेष व्यभिचार व्रत्त ?

धन्य हो ऐसे कहानीकारों को ! यह तो शुक्र है कि, भगवान ने "गंजे को नाखून नहीं दिये" वरना वह अपना ही सिर फाड़ लेता। इसी प्रकार ये तो अच्छा है कि हमारा इतिहास इन कहानीकारों के कब्जे में पूर्णतः नहीं हुआ। अन्यथा ये उसका ऐसा गला घोटते कि वह बिल्कुल मरे बगैर नहीं रहता। आगे देखिये और विचार करिये—

अर्जुन ब्रह्मचर्य व्रत्त का पालन करते हुए ही हरिद्वार से हिमालय पर चढ़ गये, वहां से सुन्दर-सुन्दर दृश्य देखते हुए घूमते घूमते मणिपुर (आसाम) में पहुंचने पर उन्होंने क्या-क्या करामात की देखिये और पढ़िये।

महेन्द्र पर्वतं द्रष्टवा,
तापसैरूपशोभितम्।
समुद्र तीरेण शनै,
मणिपूरं जगाम हे ॥१३॥
तत्र सर्वाणि तीर्थानि,
पुण्यान्यायतनानि च।

अभिगम्य महाबाहु,
रम्यगच्छन्महीपतिम् ॥१४॥
मणिपूरेश्वरं राजन्,
धर्मज्ञं चित्र वाहनम् ।
तस्य चित्रागंदा नाम,
दुहिता चारू दर्शना ॥१५॥
तां ददर्श पुरे तस्मिन,
विचरन्ती यदृच्छया ।
द्रष्ट्वा च तां वरारोहां,
चकमे चैत्र वाहनीम् ॥१६॥
अभिगम्य च राजानमवदत्,
स्वं प्रयोजनम् ।
देहि में स्वल्विमां राजन्,
क्षत्रियाय महात्मने ॥१७॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय २१४ श्लोक १३ से १७,

इस प्रकार वे तपस्वी मुनियों से सुशोभित महेन्द्र पर्वत का दर्शन कर समुद्र के किनारे-किनारे यात्रा करते हुए धीरे-धीरे मणिपुर पहुंच गये। वहां के सम्पूर्ण तीर्थों और पवित्र मंदिरों में जाने के वाद महावाहु अर्जुन मणिपुर नरेश के पास गये। राजन ! मणिपुर के स्वामी धर्मज्ञ चित्रवाहन थे। उनके चित्रांगदा नाम वाली एक परम सुन्दरी कन्या थी। उस नगर में विचरण करती हुई उस सुन्दर अंगों वाली। चित्रवाहन कुमारी को अकस्मात् देखकर अर्जुन के मन में उसे प्राप्त करने की अभिलाषा हुई। अतः अर्जुन ने राजा से मिलकर अपने मन की भावना को प्रकट

किया। कि महाराज-मुझ महा मनस्वी क्षत्रिय को आप अपनी यह पुत्री प्रदान कर दीजिये।

यह सुनकर राजा ने अर्जुन का पूर्ण विवरण सहित परिचय पूछा। अर्जुन ने अपना परिचय दिया। तब राजा ने अर्जुन को सांत्वना दी और कहा कि हमें वरदान है कि वंश चलाने हेतु एक ही सन्तान प्राप्त होगी, अतः मेरी जो कन्या है, मैं इसे पुत्री नहीं पुत्र ही समझता हूं। अतः इसका जो पहला पुत्र होगा वह मेरा ही पुत्र कहलायेगा, इसलिए आपको जब तक इसके गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न न हो यहीं रहना होगा। यही इस पुत्री से विवाह करने का शुल्क है। और अर्जुन ने "तथास्तु" कहकर राजा की बात मान ली और उस कन्या का पाणिग्रहण करके तीन वर्षों तक वहीं रहे, जब उससे एक पुत्र जिसका नाम "बभ्रुवाहन" था पैदा हुआ तो फिर वहां से उस सुन्दरी को गले से लगाकर आगे बढ़े।

इसी प्रकार इस पवित्र ब्रह्मचर्य व्रत्त को धारण किये हुए ही अर्जुन ब्रह्मचारी आगे बढ़े—और इस व्रत्त का पालन करते-करते रैवतक पर्वत के एक उत्सव में पहुंचे वहाँ पर श्री कृष्ण जी भी साथ थे। पूरी कहानी जानना चाहों तो महाभारत आदि पर्व अध्याय २१५ व २१६, २१७ और २१८ पूरे पढ़ें। यहां में जो विशेष-२ गपोड़े हैं वो कहता हूं। देखिये आगे क्या हुआ—

चित्र कौतूहले तस्मिन्,
वर्तमाने महाद्भुते।
वासुदेवश्च पार्थश्च,
सहितौ परिजग्मतुः ॥१३॥
तत्र चङ्क्रममाणौ तौ,

वसुदेव सुतां शुभाम्।
अलंकृतां सखीमध्ये,
भद्रां ददृशतुस्तदा ॥१४॥
द्रष्ट्वैव तामर्जुनस्य,
कन्दर्पः समजायत।
तं तदैकाग्रमनसं
कृष्णः, पार्थमलक्षयत् ॥१५॥
अब्रवीत् पुरुष व्याघ्रः,
प्रहसन्निव भारत।
वनेचरस्य किमिदं,
कामेनालोड्यते मनः ॥१६॥
ममैषा भगिनी पार्थ,
सारणस्य सहोदरा।
सुभद्रा नाम भद्रं ते,
पितुर्मे दयिता सुता।
यदि ते वर्तते बुद्धि-,
वक्ष्यामि पितरं स्वयम् ॥१७॥

अर्जुन उवाच—

दुहिता वसुदेवस्य,
वासुदेवस्य च स्वसा।
रूपेण चैषा सम्पन्ना,
कमिवैषा न मोहयेत् ॥१८॥
कृतमेव तु कल्याणं,
सर्वं मम भवेद् ध्रुवम् ॥
यदि स्यान्मम वार्ष्णेयी,

महिषीयं स्वसा तव ॥१६॥

प्राप्तौ तु क उपायःस्यात्,
तं ब्रवीहि जनार्दन ।
आस्थास्यामि तदा सर्वं,
यदि शक्यं नरेण तत् ॥२०॥

[महाभारत आदि पर्व अध्याय २१८ श्लोक १३ से २०,

अर्थात्, उस अत्यन्त अद्भुत् विचित्र कौतूहल पूर्ण उत्सव में श्री कृष्ण और अर्जुन एक साथ घूम रहे थे। उसी समय वहां वसुदेव जी की सुन्दरी पुत्री सुभद्रा शृंगार से सुसज्जित हो सखियों से घिरी हुई, उधर आ निकली, वहां टहलते हुए श्रीकृष्ण और अर्जुन ने उसे देखा। उसे देखते ही अर्जुन के हृदय में कामाग्नि प्रज्वलित हो उठी। उनका चित्त उसी के चिन्तन में एकाग्र हो गया। श्रीकृष्ण ने अर्जुन की इस मनोदशा को भाँप लिया। फिर वे पुरुषोत्तम हँसते हुए बोले भारत ! यह क्या वनवासी का मन भी इस तरह काम से उन्मथित हो रहा है ? कुन्तीनन्दन ! यह मेरी और सारण की सगी वहन है। तुम्हारा कल्याण हो, इसका नाम सुभद्रा है। यह मेरे पिता की वड़ी लाडली कन्या है। यदि तुम्हारा विचार इससे विवाह करने का हो तो मैं पिता से स्वयं कहूंगा।

अर्जुन ने कहा—यह वसुदेव जी की पुत्री एवं आप व सारण की वहिन अनुपम रूप से सम्पन्न है फिर यह किसका मन न मोह लेगी। सखे ! यदि यह वृष्णि कुल की कुमारी और आपकी वहिन सुभद्रा मेरी रानी हो सके तो निश्चय ही मेरा समस्त कल्याणमय मनोरथ पूर्ण हो जाय। हे जनार्दन ! बताइये, इसे प्राप्त करने का क्या उपाय हो सकता है ? यदि मनुष्य के द्वारा कर सकने के योग्य होगा, तो वह सारा प्रयत्न मैं अवश्य करूंगा। और फिर विचार-

विमर्श करके बिना किसी स्वयंवर के जबर्दस्ती सुभद्रा का अपहरण करके अर्जुन ले आये।

अर्जुन का तीसरा विवाह—

दो विवाह तो पहले लिख आये हैं। आप तीसरा और देखिये—

निवृत्तश्चार्जुनस्तत्र विवाहं,
कृतवान् प्रभुः।
उषित्वा तत्र कौन्तेयः
संवत्सरपराः क्षपाः ॥१३॥
विहृत्य च यथाकामं,
पूजितो वृष्णिनन्दनैः।
पुष्करे तु ततः शेषं,
कालं वर्तितवान् प्रभुः ॥१४॥
पूर्णे तु द्वादशे वर्षे,
खाण्डवप्रस्थमागतः।
ववन्दे धौम्यमासाद्य,
मातरं च धनंजयः ॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय २२० श्लोक १३, १४,

सुभद्रा का अपहरण करके अर्जुन द्वारिका में लौट आये, वहां उन्होंने सुभद्रा से विवाह किया और एक साल से कुछ अधिक दिन तक वे वहीं रहे।

द्वारिका में इच्छानुसार विहार करके वृष्णि वंशियों द्वारा पूजित होकर अर्जुन वहां से पुष्कर तीर्थ में चले गये; और वन-वास का शेष समय वहीं पर व्यतीत किया। बारहवां वर्ष पूरा होने पर वे खांडव प्रस्थ (इन्द्रप्रस्थ) में आये, तब उन्होंने धौम्यऋषि

एवं माता कुन्ती के पास जाकर प्रणाम किया। वस हो गया ब्रह्मचर्य व्रत और बारह वर्ष का वनवास ! जिसमें अर्जुन काम से आसक्त होकर कहते हैं कि जो भी होगा मैं वह करके भी इस सुभद्रा को प्राप्त करूंगा। जैसे आजकल के लड़के कहते हैं, कि अगर शादी करूंगा तो इसी लड़की से अथवा नहीं। इसके लिए प्राणामी दे दूंगा।

महाभारत आदि पर्व अध्याय ६१ में इस वनवास को इस प्रकार वताया है—जहां से झूठ का पूरा भंड़ाफोड़ होता है। आप आगे पढ़ेंगे। निम्न श्लोकों के आधार पर प्रश्न उठता है कि—

अर्जुन को वनवास बारह वर्ष का या तेरह मास का ?

षट सूर्येवाभवत् पृथ्वी,
पांडवैः सत्य विक्रमैः।
ततो निमित्ते कस्मिश्चिद्,
धर्मराजो युधिष्ठिरः ॥४०॥
वनं प्रस्थापया मास,
तेजस्वी सत्य विक्रमः।
प्राणेभ्योऽपि प्रियतरं,
भ्रातरं सव्य साचिनम् ॥४१॥
अर्जुनं पुरुष व्याघ्रं,
स्थिरात्मानम् गुणैर्युतम्ः।
स वै संवत्सरं पूर्णं,
मासं चैकं वनेवसन् ॥२॥
(धैर्यात् सत्याच्च धर्माच्च,
विजयाच्चाधिक प्रियः।

अर्जुनो भ्रातरं ज्येष्ठं,
नात्यवर्तत जातुचित् ॥)

महाभारत आदि पर्व अध्याय ६१ श्लोक ४०, ४१, ४२,

इस तरह सत्य पराक्रमी पांडवों के होने से यह पृथ्वी मानो छः सूर्यों से प्रकाशित होने वाली बन गयी। तदनन्तर कोई निमित्त बन जाने के कारण सत्य पराक्रमी तेजस्वी धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने प्राणों से भी अत्यन्त प्रिय स्थिर बुद्धि तथा सद्गुणयुक्त भाई नरश्रेष्ठ सव्यसाची अर्जुन को वन में भेज दिया। अर्जुन अपने धैर्य सत्य धर्म और विजयशीलता के कारण भाइयों को अधिक प्रिय थे। उन्होंने अपने बड़े भाई की आज्ञा का कभी उल्लंघन नहीं किया था।

—स वै संवत्सर पूर्ण मासं,
चैकं वने वसेत् ॥ ४२ ॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय ६१ श्लोक ४२,

अर्जुन बारह वर्ष वन में न रहकर केवल १३ मास अर्थात् एक वर्ष और १ महीना रहे।

यही आगे लिखा है पढ़िये महाभारत आदि पर्व अध्याय ६१ श्लोक ४३ व ४४, जिसका भावार्थ नीचे दिया जाता है।

उसी समय उन्होंने निर्मल तीर्थों की यात्रा की, और नाग कन्या उलूपी को पाकर पाण्डय देशीय नरेश चित्रवाहन की पुत्री चित्रांगदा को भी प्राप्त किया, और उन-उन स्थानों में उन दोनों के साथ कुछ काल तक निवास किया। तत्पश्चात् वे किसी समय द्वारिका में श्री कृष्णजी के पास गये। वहां अर्जुन ने मंगलमय वचन

बोलने वाली कमल लोचना सुभद्रा को, जो वसुदेव नंदन श्री कृष्ण की छोटी बहिन थी, पत्नी रूप में प्राप्त किया। फिर लौटकर खांडवप्रस्थ दिल्ली आ गये।

इस कहानी में जहां पांडवों की साधारण बाबू या गिरे हुए ग्रामीण से भी गिरी स्थिति को प्रकट किया गया है, कि जिनके पास सेवक और पुलिस तो दूर की बात कोई साधारण नौकर भी नहीं था। तथा किला व राजभवन तो क्या ? पांचों पांडवों के लिए पांच कोठरियां भी नहीं थी। केवल एक कोठरी थी उसी में पांचों भाई बारी-बारी से रह लिया करते थे, और वह कोठरी उसी को मिलती थी, जिसकी द्रौपदी के साथ रहने की बारी हो तथा वह कोठरी उसको उतने समय के लिए ही मिल सकती थी, जितने समय द्रौपदी उसे मिले। वाह रे ! कथावाचकों !! तुम्हारी बुद्धि तो प्रदर्शनी में रखने के योग्य है। राजाओं को भिखारियों से भी नीचे गिरा दिया। अर्जुन को भी महाकामी प्रकट किया गया है, जिसने १२ वर्ष या इस प्रमाण से केवल तेरह मास में ही तीन स्त्रियों से विवाह किये, जैसा कि ऊपर लिख आये हैं। परन्तु आगे लिखा है—

अजयद् भीमसेनस्तु,
दिशं प्राचीं महायशाः ॥३७॥
उदीचीमर्जुनो वीरः,
प्रतीचीं नकुलस्तथा।
दक्षिणां सहदेवस्तु,
विजिग्ये परवीरहा ॥३८॥
एवं चक्रुरिमां सर्वे,

वशे कृत्स्नां वसुन्धराम् ।
पञ्चभिः सूर्यं संकाशैः,
सूर्येण च विराजता ॥३९॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय ६१ श्लोक ३७, ३८, ३९,

महा यशस्वी भीमसैन ने पूर्व दिशा पर विजय पाई वीर अर्जुन ने उत्तर, और नकुल ने पश्चिम और शत्रुवीरों का संहार करने वाले सहदेव ने दक्षिण दिशा पर विजय प्राप्त की। इस तरह सब पांडवों ने समूची पृथ्वी को अपने वश में कर लिया। वे पांचों भाई सूर्य के समान तेजस्वी थे, और आकाश में नित्य उदित होने वाले सूर्य तो प्रकाशित थे ही। इस प्रकार छः सूर्य प्रतीत होते थे। एक तरफ तो अर्जुन के बारे में निम्न बात प्रसिद्ध है कि—उर्वशी काम वासना लेकर एकान्त में अर्जुन के पास आई। अर्जुन ने उसको कहा कि—

यथा कुन्ती च माद्री च,
शची चेह ममानद्ये ।
तथैव वश जननी,
त्वमेवाद्य गरीयसी ॥४६॥

महाभारत वन पर्व अध्याय ४६ श्लोक ४६,

हे माता ! मेरे लिए जैसे कुन्ती तथा माद्री माता है, और इन्द्र पत्नी शची माता है, वैसी ही तुम भी मेरी माता हो।

और दूसरी ओर अर्जुन के बारे में कहा गया है कि—

वह अर्जुन ब्रह्मचर्य व्रत की प्रतिज्ञा करके बारह वर्ष में तीन स्त्रियों से विवाह और समागम करता रहा। यह बात अर्जुन के अनुरूप प्रतीत नहीं होती है। सर्व प्रकार पता चलता है कि—यह कहानी सर्वथा झूठी है।

द्रौपदी के पांच पुत्र ?

कहानी बनाने वाले ने अपनी ओर से तो अपनी कहानी को पक्की और सच्ची सिद्ध करने के लिए अनेकों एक से एक बढ़कर बातें बनाई हैं उनमें से एक यह भी हैं कि, द्रौपदी के पुत्र भी पांच ही लिखे, न कम, न अधिक।

यह भी पांच पति सिद्ध करने का ही एक प्रयास है और कुछ नहीं।

इतने लेख से यह तो भली-भाँति समझ में आ गया होगा कि—द्रौपदी के पांच पति होने की कहानी सर्वथा निःसार और निर्मूल है।

इस कहानी के बनाने वाले का उद्देश्य या तो पांडवों के चरित्र को बहुत बुरा सिद्ध करना है, या वाममार्ग का प्रचार करना उसका प्रयोजन है। जब यह पता लग गया कि, द्रौपदी के पांच पति होने की कहानी सर्वथा झूठी है तो यह जानना आवश्यक रहा कि, द्रौपदी का एक पति कौन था—

अर्जुन या युधिष्ठिर ?

प्रायः यही सुनने में आता है कि, उसका पति अर्जुन था, इस धारणा का आधार यह है कि द्रौपदी के भाई धृष्टद्युम्न ने जो लक्ष्य वेध की शर्त रक्खी थी उसको अर्जुन ने ही पूरा किया था देखिये—

अर्जुन द्वारा लक्ष्य वेध—

यत् पार्थिवै रुक्मसुनीथ वक्रैः,
राधेयदुर्योधन शल्य शाल्वैः।

स्वयम्वर में अर्जन द्वारा लक्ष्य वेध

तदा धनुर्वेद परैर्नृसिंहैः,
कृतं न सज्यं महतोऽपियत्नात् ॥१९॥
तदर्जुनो वीर्यवतां तदर्प—,
स्तदैन्द्रिरिन्द्रावरजप्रभावः।
सज्यं च चक्रे निमिषान्तरेण,
शराश्च जग्राह दशार्धसंख्यान् ॥२०॥
विव्याध लक्ष्यं निपातच्च,
छिद्रेण भूमौ सहसाति विद्धम्।
ततोऽन्तरिक्षे च बभूव नादः,
समाज मध्ये च महान् निनादः ॥२१॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १८७ श्लोक १९, २०, २१,

रूक्म, सुनीथ, वक्र, कर्ण, दुर्योधन, शल्य तथा शाल्व आदि धनुर्वेद के पारंगत विद्वान पुरुष सिंह राजा लोग महान प्रयत्न करके भी जिस धनुष पर डोरी न चढ़ा सके उसी धनुष पर विष्णु के समान प्रभावशाली एवं पराक्रमी वीरों में श्रेष्ठता का अभिमान रखने वाले इन्द्र कुमार अर्जुन ने पलक मारते-मारते प्रत्यंचा चढ़ा दी, इसके बाद उन्होंने वे पांच बाण भी अपने हाथ में ले लिये। और उन्हें चलाकर बात की बात में लक्ष्य वेध दिया। बिधा हुआ लक्ष्य अत्यंत छिन्न-भिन्न हो यन्त्र के छेद से सहसा पृथ्वी पर गिर पड़ा उसी समय आकाश में बड़े जोर का हर्षनाद हुआ। और सभा मंडप में तो उससे भी महान आनन्द कोलाहल छा गया।

नोट :—इस शर्त को अर्जुन ने पूरा किया था, इसलिए द्रोपदी को लेने का अधिकार केवल अर्जुन को ही था, किसी दूसरे को नहीं।

और फिर महाराजा द्रुपद की खुद की इच्छा भी यही थी कि मेरी कन्या अर्जुन को ही विवाही जाये। एवं इसी निमित्त स्वयम्वर को रचाया गया था, कि अर्जुन का पता लगे। देखिये— महाराजा द्रुपद की स्वयम्वर से पहले की दशा—

यज्ञ सेनस्य कामस्तु,
पाण्डवाय किरीटिने।
कृष्णां दद्यामिति सदा,
न चैतद् विवृणोति सः ॥८॥
सोऽन्वेषमाणः कौन्तेयं,
पाञ्चालयो जनमेजय।
दृढं धनुरनानम्यं,
कारयामास भारत ॥९॥
यन्त्रं वैहायसं चापि,
कारयामास कृत्रिमम्।
तेन यन्त्रेण समितं,
राजा लक्ष्यं चकार सः ॥१०॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १८४ श्लोक ८, ९, १०,

अर्थ—राजा द्रुपद के मन में सदा यही इच्छा रहती थी कि में पाण्डुनन्दन अर्जुन के साथ द्रौपदी का विवाह करूँ, परन्तु वे अपने इस मनोभाव को किसी पर प्रकट नहीं करते थे। हे भरत वंशी जनमेजय! पाञ्चाल नरेश ने कुन्ती कुमार अर्जुन को खोज निकालने की इच्छा से एक ऐसा दृढ़ धनुष बनवाया, जिसे दूसरा कोई झुका भी न सके। और राजा ने एक कृत्रिम आकाश यन्त्र भी बनवाया (जो तीव्र वेग से आकाश में घूमता रहता था) उस

यन्त्र के छिद्र के ऊपर उन्होंने उसी के बराबर का लक्ष्य तैयार कराकर रखवा दिया। इसके बाद उन्होंने निम्नलिखित घोषणा करा दी—

महाराजा द्रुपद द्वारा घोषणा—

इदं सज्यं धनुः कृत्वा,
सज्जैरेभिश्च सायकैः।
अतीत्य लक्ष्यं यो वेद्धा,
स लब्धा मत्सुतामिति ॥११॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १८४ श्लोक ११,

जो वीर इस धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाकर इन प्रस्तुत बाणों द्वारा ही मन्त्र के छेद के भीतर से इसे लाँघकर लक्ष्य वेध करेगा वही मेरी पुत्री को प्राप्त कर सकेगा!

अब आप स्वयम्वर (लक्ष्य वेध) के बाद की दशा को भी देखिये—

जब अर्जुन ने द्रौपदी को जीत लिया तो द्रुपद को बड़ी चिन्ता हुई एवं उन्होंने तभी धृष्टद्युम्न को गुप्त रूप से उनके पास भेजा एवं उनका पूरा पता लगाने को कहा और अपने लिए अनेक प्रकार के अपशब्द महाराज द्रुपद ने कहे कि कहीं किसी शूद्र अथवा नीच जाति के मनुष्य ने तो मेरी पुत्री को प्राप्त नहीं कर लिया। पूर्ण विवरण जानने के लिए आप महाभारत का आदि पर्व अध्याय १९१ व १९२ एवं १९३ देखिये।

धृष्टद्युम्न को महाराजा द्रुपद का वचन—

कश्चिन्न तप्स्ये परम प्रतीतः,
संयुज्य पार्थेन नरर्षभेण।

वदस्व तत्त्वेन महानुभाव,
कोऽसौ विजेता दुहितुर्ममाद्य ॥१७॥
विचित्र वीर्यस्य सुतस्यकश्चित्,
कुरु प्रवीरस्य ध्रियन्ति पुत्राः ।
कच्चित् तु पार्थेन यवीयसाद्य,
धनुर्गृहीतं निहतं च लक्ष्यम् ॥१८॥
[महाभारत आदि पर्व अध्याय १९१, श्लोक १७, १८,

हे धृष्टद्युम्न ! क्या ऐसा सौभाग्य होगा कि मैं नर श्रैष्ठ अर्जुन से द्रोपदी का विवाह करके अतयन्त प्रसन्न होऊँ और कभी भी संतप्त न हो सकूं ? महानुभाव पुत्र ! ठीक-ठीक बताओ ! आज जिसने मेरी पुत्री को जीता है वह पुरूष कौन है ? क्या कुरुकुल के श्रैष्ठ वीर विचित्र वीर्य कुमार पांडु के सूरवीर पुत्र अभी जिवित है ? क्या आज कुन्ती के सबसे छोटे पुत्र अर्जुन ने ही उस धनुष को उठाया और लक्ष्य को मार गिराया था ? जब इस तरह से महाराजा द्रुपद परेशान थे तो उनके पुत्र धृष्टद्युम्न ने कहा—

यथा हि लक्ष्यं निहतं धनुश्च,
सज्यं कृतं तेन तथा प्रसह्य ।
यथा हि भाषन्ति परस्परं ते,
छन्ना ध्रुवं ते प्रचरन्ति पार्थाः ॥१३॥
महाभारत आदि पर्व अध्याय १९२, श्लोक १३,

महाराज ! जिस प्रकार उन्होंने धनुष पर बल पूर्वक प्रत्यञ्चा चढ़ायी, जिस तरह दुर्भेद्य लक्ष्य को बेद्य गिराया, और जिस प्रकार वे सभी भाई आपस में बातें करते हैं, उससे यह निश्चय हो जाता है कि, कुन्ती के पुत्र ही ब्राह्मण वेश में छिपे हुए विचर रहे हैं ।

धृष्टद्युम्न ने यही नहीं अनेकों प्रमाण एवं बातें बतायी, परन्तु महाराजा द्रुपद को सन्तोष नहीं हुआ तो उन्होंने पुरोहित को बुलवाया और उससे कहा—कि आप उनके पास जाओ और कहना कि मैं (महाराज द्रुपद) आपका परिचय जानना चाहता हूं। कि क्या आप लोग महात्मा पाण्डु के पुत्र हैं? "जैसा कि महाभारत आदि पर्व अध्याय १९२ के श्लोक १४ में कही है" कि—

विद्याम युष्मानिति भाषमाणो,
महात्मानः पाण्डुसुतास्तु कच्चित् ॥१४॥

महाराजा द्रुपद का अनुरोध मानकर पुरोहित जी गये, उन वीर पुरुषों को जहां अनेकों बातें कहीं है वहां यह भी कहा कि—

अयं हि कामो द्रुपदस्य राज्ञो,
हृदि स्थितो नित्य मनिन्दिताङ्गाः।
यदर्जुनो वै प्रथुदीर्घबाहु-,
धर्मेण विन्देत सुतां ममैताम् ॥१६॥

हे सर्वांग सुन्दर शूरवीरो! राजा द्रुपद के हृदय में नित्य निरन्तर यह कामना रही है कि मोटी एवं विशाल भुजाओं वाले अर्जुन मेरी इस पुत्री का धर्म पूर्वक पाणि ग्रहण करें।

इस पर युधिष्ठिर ने कहा कि ब्राह्मण! राजा की पहली आज्ञा अवश्य पूरी होगी। और इस राजकन्या को प्राप्त करने में हम पूर्णतः ग्रहण करने योग्य है। जब ऐसा समाचार पुरोहित जी ने आकर राजा को दिया तो उन्होंने उन पाचों शूर वीरों को भोजन के लिए आमन्त्रित किया जब वह भोजन कर चुके तो राजा द्रुपद के मन को अभी भी शान्ति नहीं थी। और उन्होंने युधिष्ठिर से स्वयं ही कहा कि में आप लोगों की बात सुनकर

(परिचय जानकर) ही विधि पूर्वक विवाह की तैयारी करूँगा।
इस पर युधिष्ठिर जी बोले—

मां राजन् विमना भूस्त्वं,
पाञ्चालयं प्रीतिरस्तु ते।
ईप्सितस्ते ध्रुवः कामः,
संवृत्तोऽयमसंशयम् ॥८॥
वयं हि क्षत्रिया राजन्,
पाण्डोः पुत्रा महात्मनः।
ज्येष्ठं मां विद्धि कौन्तेयं,
भीमसेनार्जुना विमौ ॥९॥
आभ्यां तव सुता राजन्,
निर्जिता राज संसदि।
यमौ च तत्र कुन्ती च,
यत्र कृष्णा व्यवस्थिता ॥१०॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४, श्लोक ८, ९, १०,

युधिष्ठिर जी बोले—

हे पाञ्चाल राज ! आप उदास न हो, आपको प्रसन्न होना चाहिये, आपके मन में जो अभीष्ट कामना थी, वह निश्चय ही आज पूरी हुई है इसमें सशंय नहीं है।

राजन् ! हम लोग क्षत्रिय ही है, महात्मा पाण्डु के पुत्र हैं। मुझे कुन्ती का ज्येष्ठ (बड़ा) पुत्र समझिये। ये दोनों भीमसैन और अर्जुन है। राजन् इन्हीं दोनों ने समस्त राजाओं के समूह में आपकी पुत्री को जीता है। उधर वे दोनों नकुल और सहदेव

हैं। और माता कुन्ती वहीं गयी हैं। जहां राजकुमारी कृष्णा हैं। (यह सुनकर राजा द्रुपद को शान्ति एवं हर्ष का अनुभव हुआ।)

नोट :—यह सब होते हुए भी सारा महाभारत पढ़ जाइये, यह कहीं आपको लिखा नहीं मिलेगा कि—अर्जुन का विवाह द्रोपदी के साथ हुआ था। यह ठीक है कि—अर्जुन ने ही उसको जीता था, पर विवाह उसका अर्जुन के साथ न होकर श्री युधिष्ठिर जी के साथ ही हुआ। इसके कुछ कारण हैं उनको पढ़िये एवं विचार करिये—

युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा कि—

त्वया जिता फाल्गुन याज्ञसेनी,
त्वयैव शोभिष्यति राजपुत्री।
प्रज्वाल्यतामाग्नीरमित्र साह,
ग्रहाण पाणिं विधिवत् त्वमस्याः ॥७॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९० श्लोक ७,

हे अर्जुन ! तुमने द्रौपदी को जीता है, इस लिए तुम्हारे साथ ही इस राजकुमारी की शोभा होगी। शत्रुओं का सामना करने वाले वीर। तुम अग्नि प्रज्वलित करो। और (अग्निदेव के साक्ष्य में) विधिपूर्वक इस राजकन्या का पाणि ग्रहण करो। उत्तर देते हुए अर्जुन ने कहा—

मा मां नरेन्द्रत्वधर्मभाजं,
कृथा न धर्मोऽयमशिष्टद्रष्टः।
भवान् निवेश्यः प्रथमं ततोऽयं,
भीमो महाबाहुरचिन्त्यकर्मा ॥८॥

अहं ततो नकुलोऽनन्तरं मे,
पश्चादयं सहदेवस्तरस्वी ।
वृकोदरोऽहं च यमौ च राज–,
न्नियं च कन्या भवतो नियोज्याः ॥६॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १६० श्लोक ८, ६,

हे महाराज ! मुझको आप अधर्म का भागी न बनाइये, (बड़े भाई के अविवाहित रहते छोटे भाई का विवाह हो जाय) यह धर्म नहीं है। ऐसा व्यवहार तो अनार्यों में देखा गया है। पहले आपका विवाह होना चाहिये। तत्पश्चात्त। अचिन्त्यकर्मा महाबाहु भीमसेन का और फिर मेरा। तत्पश्चात्त नकुल फिर वेग वान् सहदेव विवाह कर सकते हैं। राजन् ! भैय्या भीमसेन, मैं, नकुल, सहदेव, तथा यह राजकन्या सभी आपको आज्ञा के आधीन है। अतः यह अनार्यों का कार्य करा के मुझे अधर्म का भागी न बनाइये, यह आर्यों का धर्म नहीं है।

मनुस्मृति का वचन है—

दाराग्नि होत्र सयोगं,
कुरुते योऽग्रजे स्थिते ।
परिवेत्ता स विज्ञेयः,
परिवित्तिस्तु पूर्वजः ॥१७१॥
परिवित्तिः परिवेत्ताः,
यया च परिविद्यते ।
सर्वेते नरकंयान्ति,
दातृ याजक पंचमा ॥१७२॥

मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १७१, १७२,

अर्थ—जो कनिष्ट (छोटा) ज्येष्ठ (बड़े) भ्राता (भाई) के रहते हुए उससे पहले विवाह और अपने विवाह के निमित्त अग्निहोत्र करे उसको "परिवेत्ता" अर्थात (वड़े भाई के अविवाहित रहते यदि छोटा भाई विवाह कर ले तो उसको "परिवेत्ता" और बड़े भाई को "परिविति" जानना चाहिये) परिवित्ति, परिवेत्ता और वह कन्या तथा कन्या का देने वाला और याजक (विवाह का आचार्य) पुरोहित यज्ञ कराने वाला ये पाचों नरक में जाते हैं। प्रयोजन यह है कि,—अर्जुन ने द्रौपदी के साथ विवाह करना उचित न समझा क्योंकि—बड़ा भाई युधिष्ठिर अभी अविवाहित है। इस लिए अर्जुन ने कहा कि—विवाह तो पहले आपका होना चाहिये। अर्जुन के इस प्रस्ताव को युधिष्ठिर ने उचित तो समझा पर कन्या के पिता से स्वीकृति लिये बिना यह कैसे हो सकता है? ऐसा सोचकर राजा द्रुपद से इस प्रस्ताव की स्वीकृति लेनी चाही। युधिष्ठिर का ऐसा सोचना और राजा द्रुपद से स्वीकृति लेना आवश्यक ही था। क्योंकि—राजा द्रुपद और द्रौपदी का भाई, धृष्टद्युम्न इनका यह कहीं आग्रह न हो कि—द्रौपदी का विवाह अर्जुन के साथ ही होना चाहिये। यदि ऐसा आग्रह हुआ तो अर्जुन पर ही दबाव डालना पड़ेगा कि तुम ही विवाह करो। यह सब विचार करके महाराज युधिष्ठिर राजा द्रुपद के पास गये और कहने लगे—

तमब्रवीत् ततो राजा,
धर्मात्मा च युधिष्ठिरः।
ममापि दार सम्बन्धः,

कार्यस्तावद् विशाम्पते ॥२१॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक २१,

धर्मात्मा युधिष्ठिर ने राजा द्रुपद से कहा कि हे राजन् ! मेरा भी विवाह सम्बन्ध करने योग्य है, (अर्थात मेरा भी विवाह अभी नहीं हुआ है)। द्रुपद तथा धृष्टद्युम्न को इस पर कुछ आग्रह नहीं था कि अर्जुन के साथ ही विवाह हो, यद्यपि यह इच्छा भी हो कि द्रौपदी का विवाह अर्जुन के साथ हो तो भी आग्रह का कोई कारण न था, क्योंकि पान्डवों के साथ सम्बन्ध होना कौन थोड़ा था, यह भी एक बहुत बड़ी बात थी। विवाह पाचों में से चाहे किसी के साथ हो, सम्बन्ध तो सबके साथ हो जायेगा।

एक स्थल पर ऐसा लिखा भी है कि राजा द्रुपद यह कह रहे थे कि—

किं करिष्यामि ते नष्टाः,
पाण्डवाः पृथया सह।
इत्येवमुक्तत्वा पाञ्चाल,
शुशोच परमातुरः ॥७५॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १६६ श्लोक ७५,

मैं अब क्या करूं कुन्ती सहित पाचों पान्डव तो (लाक्षाग्रह में जलकर) नष्ट हो गये। ऐसा कहकर पाञ्चालराज द्रुपद अत्यन्त दुखी एवं शोकातुर हो गये। उनको शोक में डूबा हुआ देखकर उनके गुरु ने कहा—

वृद्धानुशासने सक्ताः
पाण्डवा धर्मचारिणः।
तादृशा न विनश्यन्ति,

नैव यान्ति पराभवम् ॥७७॥

उपश्रुतिर्महाराज.

पाण्डवार्थे मया श्रुता ।

यत्र वा तत्र जीवन्ति,

पाण्डवास्ते न संशयः ॥८०॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १६६ श्लोक ७७ व ८०,

गुरु बोले ! महाराज ! पाण्डव लोग बड़े बूढ़ों की आज्ञा पालने में तत्पर रहने वाले तथा धर्मात्मा है । ऐसे लोग न तो नष्ट होते हैं । और न पराजित ही होते हैं । एवं मैंने भी पान्डवों के विषय में उपश्रुति सुन रक्खी है, वे पाण्डव कहीं न कहीं अवश्य जिवित है । इसमें संशय नहीं है ।

पाण्डवों की खोज के लिए स्वयम्वर—

मया दृष्टानि लिङ्गानि,

ध्रुवमेष्यन्ति पाण्डवाः ॥८१॥

यन्निमित्त मिहायन्ति,

तच्छृणुष्व नराधिप ॥८२॥

स्वयंवरः क्षत्रियाणां,

कन्यादाने प्रदर्शितः ।

स्वयं वरस्तु नगरे,

घुष्यतां राजसत्तम ॥८३॥

यत्र वा निवसन्तस्ते,

पाण्डवाः प्रथया सह ।

दूरस्था वा समीपस्थाः,

स्वर्गस्था वापि पाण्डवाः ।।८४।।

श्रुत्वा स्वयम्वरं राजन्,
समेष्यन्ति न संशयः ।
तस्मात् स्वयंवरो राजन्,
घुष्यतां मा चिरं कृथाः ।।८५।।

महाभारत आदि पर्व अध्याय १६६ श्लोक ८१ से ८५,

अर्थ—मैंने ऐसे (शुभ) चिन्ह देखे हैं, जिनसे सूचित होता है कि पाण्डव यहां अवश्य पधारेंगे। नरेश्वर ! वे जिस निमित्त से यहां आ सकते हैं। वह सुनिये—क्षत्रियों के लिए कन्यादान का श्रेष्ठ मार्ग स्वयम्वर बताया गया है। नृप श्रेष्ठ ! आप सम्पूर्ण नगर में स्वयम्वर की घोषणा करा दें, फिर पाण्डव अपनी माता कुन्ती के साथ दूर हों या निकट हों, अथवा स्वर्ग में ही क्यों न हों,—जहां कहीं भी होंगे, स्वयम्वर का समाचार सुनकर यहां अवश्य आयेंगे। इसमें संशय नहीं है। अतः राजन ! आप (सर्वत्र) स्वयम्वर की सूचना करा दे, इसमें विलम्ब न करें।।

इससे पहले लिखा है कि राजा द्रुपद को पाण्डवों के जलने का समाचार सुनकर इतना दुःख हुआ जितना अपने (औरस) पुत्रों की मृत्यु पर होता है।

इससे स्पष्ट है कि—यह स्वयम्वर की घोषणा पाण्डवों को प्राप्त करने के लिए की गयी थी। अब पाण्डव मिल गये और उनमें से एक ने वह शर्त पूरी कर दी, जो धृष्टद्युम्न ने स्वयम्वर की सभा में रक्खी थी। अब पाचों में से किसी एक के साथ द्रौपदी का विवाह हो जाय तो भी द्रुपद की इच्छा पूर्ण ही है। और पाचों में से यदि युधिष्ठिर के साथ विवाह होता है, तो और

भी अच्छा है, क्योंकि राज्य मिलने पर महाराजा तो युधिष्ठिर ही होंगे। अर्जुन के स्थान पर यदि उनके साथ विवाह हो तो हानी की बात नहीं लाभ की ही है। इसलिए राजा द्रुपद ने सहर्ष कह दिया कि—

द्रुपद उवाच—

भवान् वा विधिवत्,
पाणिं गृणातु दुहितुर्मम।
यस्य वा मन्यसे वीर,
तस्य कृष्णा मुपादिश ॥२२॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक २२,

राजा द्रुपद बोले—हे वीर! आप ही विधिपूर्वक मेरी पुत्री का पाणिग्रहण करें, अथवा आप अपने भाइयों में से जिसके साथ चाहें, उसी के साथ कृष्णा के विवाह की आज्ञा दे दें।

यह प्रथम प्रमाण है—जिससे पता चलता है कि, द्रौपदी का पति एक ही था और वह युधिष्ठिर ही था।

युधिष्ठिर का विवाह—

वैशम्पायन जी कहते हैं कि—

ततोऽब्रवीद् भगवान् धर्मराज–,
मद्यैव पुण्याहमुत वः पाण्डवेय।
अद्य पौष्यं योगमुपैति चन्द्रमाः,
पाणिं कृष्णायास्त्वं गृहाणाद्यपूर्वम् ॥५॥
ततो राजा यज्ञसेनः सपुत्रो,
जन्यार्थमुक्तं बहु तत् तदग्राम्।

समानयामास सुतां च कृष्णा–,
माप्लाव्य रत्नैर्बहु भिर्विभूष्य ॥६॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९७ श्लोक ५ व ६,

हे जनमेजय ! तदनन्तर भगवान व्यास ने धर्मराज युधिष्ठिर से कहा— पाण्डु नन्दन ! आज ही तुम लोगों के लिए पुण्य दिवस हैं। आज चन्द्रमा भरण पोषण कारक पुण्य नक्षत्र पर जा रहा है। इसलिए तुम्हीं कृष्णा का पाणिग्रहण करो।

व्यास जी का यह आदेश सुनकर पुत्रों सहित राजा द्रुपद ने वर वधु के लिये कथित समस्त उत्तम वस्तुओं को मंगवाया और अपनी पुत्री कृष्णा को स्नान कराकर बहुत से रत्नमय आभूषणों द्वारा विभूषित किया।

महर्षि धौम्य द्वारा विवाह संस्कार—

ततः समाधाय स वेदपारगो,
जुहाव मन्त्रैर्ज्वलितं हुताशनम्।
युधिष्ठिरं चाप्युपनीय मन्त्रवि–,
न्नियोजया मास सहैव कृष्णया ॥११॥
प्रदक्षिणं तौ प्रगृहीतपाणि,
समानयामास स वेदपारगः।
ततोऽभ्यनुज्ञाय तमाजिशोभिनं,
पुरोहितो राजगृहाद्विनिर्ययौ ॥१२॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९७ श्लोक ११, १२,

तत्पश्चात् वेद के पारंगत विद्वान् मन्त्रज्ञ पुरोहित धौम्य ने (वेदी पर) प्रज्वलित अग्नि की स्थापना करके उसमें मन्त्रों द्वारा आहुति

दी, और युधिष्ठिर को बुलाकर कृष्णा (द्रौपदी) के साथ उनका गँठबन्धन कर दिया। वेदों के परिपूर्ण विद्वान् पुरोहित ने उन दोनों दम्पत्ति का पणिग्रहण कराकर उनसे अग्नि की परिक्रमा करवायी, फिर (अन्य शास्त्रोक्त विधियों का अनुष्ठान करके) उनका विवाह कार्य सम्पन्न कर दिया। इसके बाद संग्राम में शोभा पाने वाले युधिष्ठिर को छुट्टी देकर पुरोहित जी भी उस राजभवन से बाहर चले गये।

राजा द्रुपद द्वारा विवाह में दिया गया धन—

कृते विवाहे द्रुपदो धनं ददौ,
महारथेभ्यो बहुरूप मुत्तमम्।
शतं रथानां वरहेममालिनां,
चतुर्युजा हेमखलीन,मालिनाम् ॥१५॥
शतं गजनामपि पद्मिना तथा,
शतं गिरिणामिव हेम श्रङ्गिणाम।
तथैव दासी शतमग्र्य यौवनं
महार्हं वेषाभरणाम्बरस्त्रजम् ॥१६॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९७ श्लोक १५ व १६,

विवाह कार्य सम्पन्न हो जाने पर द्रुपद ने महारथी पाण्डवों को दहेज में बहुत सा धन और नाना प्रकार की उत्तम वस्तुएँ समर्पित की सुन्दर सुवर्ण की मालाओं और सुवर्ण जटित मोतियों से सुशोभित सौ रथ प्रदान किये। जिनमें चार-चार घोड़े जुते हुए थे। पद्म आदि उत्तम लक्षणों से युक्त सौ हाथी तथा पर्वतों के समान ऊँचे और सुनहरे हौंदों से सुशोभित सौ हाथी और

(साथ ही) बहुमूल्य शृंगार सामग्री वस्त्राभूषण एवं हार धारण करने वाली एक सौ नव यौवना दासियाँ भेंट की। और इनको पाकर पाण्डव लोग द्रुपद के नगर में ही सुख पूर्वक निवास करने लगे।

जैसी विधि विवाह की श्री युधिष्ठिर जी के साथ लिखी हुई है, ऐसी अर्जुन के साथ सारे महाभारत में कहीं भी नहीं लिखी है।

अकेले युधिष्ठिर का विवाह करके पुरोहित राजभवन से बाहर चले गये जो सज्जन द्रौपदी का पति अर्जुन को बताते हैं, उनको अकेले अर्जुन का विवाह महाभारत में लिखा कहीं नहीं मिलेगा। एक आर्य समाज के पुरोहित जी ने भरी सभा में घोषणा कर दी कि मैं सिद्ध कर दूंगा कि द्रौपदी का पति अर्जुन ही था, युधिष्ठिर नहीं।

मैंने कहा कि आप अर्जुन का विवाह हुआ, ऐसा लिखा दिखा दें तो में स्वीकार कर लूंगा। पर में घोषणा करता हूँ कि जहाँ अर्जुन का विवाह आपको लिखा मिलेगा, वहाँ अकेले अर्जुन का नहीं, वहाँ भीम, अर्जुन नकुल और सहदेव चार का लिखा मिलेगा। प्रमाण दिखाने के लिए उनको २४ घन्टे का समय तथा महाभारत का ग्रन्थ दे दिया गया। उनको इतने समय में मगज-पच्ची करने पर वही प्रमाण मिला। जो मैंने बताया था, अर्थात जिसमें कहा गया है कि—

क्रमेण चानेन नराधिपात्मजा,
वरस्त्रियस्ते जगृहुस्तदा करम्।
अहन्यहन्युत्तमरूपधारिणो,

महारथाः कौरव वंश वर्धनाः ॥१३॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९७-श्लोक १३,

इसी क्रम से कौरव कुल की वृद्धि करने वाले उत्तम शोभा धारण करने वाले महारथी राजकुमार पान्डवों ने "एक-एक दिन परम सुन्दरी द्रौपदी का पाणिग्रहण किया"।

नोटः—इस गपोड़े की पोल यहीं अगले श्लोक में पूरी खोल दी है।

ध्यान दिजीये—

इदं च तत्राद्भुतरूपमुत्तमं
जगाद् देवर्षिरतीत मानुषम्।
महानुभावा किल सा सुमध्यमा,
बभूव कन्यैव गते गतेऽहनि ॥१४॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९७ श्लोक १४,

देवर्षि ने वहां घटित हुई, इस अद्‌भुत, उत्तम एवं अलौकिक घटना का वर्णन किया है। कि सुन्दर कटि प्रदेश वाली महानुभावा द्रौपदी "प्रति बार विवाह के दूसरे दिन कन्याभाव को ही प्राप्त हो जाती थी।

अर्थात—द्रौपदी विवाह के हर दूसरे दिन कन्या हो जाती थी।

नोटः—यह कितनी हास्यास्पद बात है, कथा वाचक लोग मूर्ख मन्डली में तो इस वाक्य को कह कर प्रभाव डाल सकते हैं। पर बुद्धिमान तो पूछेंगे कि विवाह संस्कार के समय वधु के किसी अंग में या सारे शरीर में या आकृति आदि में कुछ परिवर्तन हो जाते हैं, जो वह उस समय कन्या नहीं रहती, फिर विवाह के

दूसरे दिन द्रौपदी के वह परिवर्तन हट जाते थे, और फिर पूर्ववत् हो जाती थी। वह क्या थे ? तो तेरी भी चुप और मेरी भी चुप

"द्रौपदी दूसरे दिन फिर कन्या हो जाती थी ?"

इस गपोड़े ने उसकी पोल खोल दी कि—

"क्रम से सबने पाणिग्रहण किया"

द्रौपदी का पति केवल युधिष्ठिर ही था, वह अर्जुन तथा युधिष्ठिर, और द्रुपद की बात चीत से भी सिद्ध हो गया और विवाह विधि से भी अब कुछ और प्रमाण भी देखिये, और बुद्धि से विचार करिये।

तीसरा प्रमाण—कुन्ती ने जो द्रौपदी को आशीर्वाद दिया उसमें कहा है—

कुरुजाङ्गलमुख्येषु,
राष्ट्रेषु नगरेषु च।
अनु त्वमभिषिच्यस्व,
नृपतिं धर्म वत्सला ॥९॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९८ श्लोक ९,

तुम्हारे पति कुरुजाङ्गल देश के प्रधान-प्रधान राष्ट्रों तथा नगरों के राजा हों और उनके साथ ही रानी के पद पर तुम्हारा अभिषेक हो। धर्म के प्रति तुम्हारे हृदय में स्वाभाविक स्नेह हो।

नोट:—अब प्रश्न पैदा होता है कि—महारानी तो केवल महाराजा की पत्नी ही बन सकती है। पाचों भाई तो महाराजा बन नहीं सकते। एक भाई ही महाराजा बन सकता है। और वह भी अर्जुन महाराजा नहीं बन सकता वह कुन्ती और पाण्डु का तीसरा पुत्र था। प्राचीन प्रथा के अनुसार राजा का बड़ा पुत्र ही राजा

बन सकता है। इस लिए युधिष्ठिर ही महाराजा बन सकते थे। और युधिष्ठिर की पत्नी ही राज महिषी अर्थात महारानी बन सकती थी। अतः द्रौपदी को महारानी बनने का आर्शीवाद भी यही सिद्ध करता है कि—द्रौपदी युधिष्ठिर की ही पत्नी थी, अर्जुन की नहीं। एक प्रश्न और उसका उत्तर—

प्रश्नः—कोई भी कह सकता है कि—कुन्ती के आर्शीवाद में तो यह भी है "तथा त्वं भव भर्तृषु' इस वाक्य में "भर्तृषु" भर्ताओ (पतियों) में यह बहुवचन है जिससे द्रौपदी के बहुत पति होने की ध्वनि निकलती है।

उत्तरः—पहिले लिखा भी जा चुका है तथा वहीं कुन्ती का वाक्य भी है कि—

'भुक्तं समेत्य सर्वे,, में "भुंज,, धातु का "भुक्तं,, शब्द परस्मै पदी है जिसका अर्थ होता है कि तुम सब मिलकर उसका पालन करो। यदि यह ही भाव माना जाये तो "'भर्तृषु' का अर्थ होगा भरण-पोषण करने वालों में पर जब कि यह सिद्ध हो चुका है कि, द्रौपदी के पांच पति नहीं थे। केवल एक ही पति था, ऐसी स्थिति में सीधी बात यह है कि, पाण्डव विरोधी या वाम मार्गियों का डाला हुआ है। बहु वचन का रूप "भर्तृषु" हटाकर वैदिक सिद्धानुसार पाठ—"तथा त्वं भव भर्तृरि" एक वचन वाला कर लेना चाहिये।

इससे छन्दोभङ्ग दोष भी न होगा अक्षर पूरे रहेंगे और कुन्ती-पाचों पाण्डव द्रौपदी, व्यास जी, नारद जी तथा द्रुपद परिवार सभी वेद विरुद्ध, धर्म विरुद्ध परम्परा विरुद्ध पाप के दोष

से बच जायेंगे। इस लिए वहां "भर्तृषु" नहीं बल्कि "भर्तृरि" पाठ ही पढ़ाना चाहिये।

चौथा प्रमाण—बारह वर्ष की अवधि समाप्त होने पर मतस्य देश के राजा विराट के यहां पाचों पाण्डव और द्रौपदी अपने-अपने नाम और वेश बदल कर रहे। उस समय दौपदी रानी को श्रृंगार कराने का कार्य करती थी। उस समय द्रौपदी का नाम सैरन्ध्री था। विराट का साला कीचक द्रौपदी (सैरन्ध्री) को कुदृष्टी से देखता था, और उसके लिए कुभावना रखता था, एवं द्रौपदी को फंसाने का यत्न करता था। इस स्थिति में महादुखी होकर द्रौपदी भीमसैन के पास जाकर रोई, भीमसैन द्वारा यह पूछे जाने पर कि—तुम क्यों दुःखी हो, द्रौपदी ने कहा कि—

अशोच्यत्वं कुतस्तस्य,
यस्या भर्ता युधिष्ठिरः।
जानन् सर्वाणि दुःखानि,
किं मां त्वं परिपृच्छसि ॥१॥

महाभारत विराट पर्व अध्याय १८, श्लोक १,

द्रौपदी कहने लगी, जिस स्त्री के पति राजा युधिष्ठिर हों, वह बिना शोक के रहे, यह कैसे सम्भव हो सकता है ? हे भीमसेन ! तुम मेरे सारे दुःखों को जानते हुए भी मुझसे कैसे पूछते हो ?

नोट—यहां पर आगे इसी पर्व में द्रौपदी ने अपने सारे दुःख भीमसेन के आगे रोये, सारे कष्टों का वखान किया।

विशेष जानकारी हेतु महाभारत का अट्ठारवां अध्याय विराट पर्व पढ़ें। यहां स्पष्ट ही है कि—द्रौपदी अपना पति युधिष्ठिर को ही बताती है।

पांचवां प्रमाण—भीमसेन ने उस दुष्टात्मा कीचक को मार डाला जो द्रौपदी के साथ दुराचार की भावना रखता हुआ उसको सताता था। और कीचक को मार कर भीमसेन ने परम प्रसन्नता अनुभव करते हुए कहा—

> अद्याहमनृणो भूत्वा,
> भ्रातुर्भार्यापहारिणम्।
> शांति लब्धास्मि परमां,
> हत्वा सरन्ध्रि कण्टकम् ॥७६॥

महाभारत विराट पर्व अध्याय २२ श्लोक ७६,

अर्थ—जो सैरेन्ध्रि (द्रौपदी) के लिए कण्टक (कांटा) था। जिसने मेरे भाई की पत्नी का अपहरण करने की चेष्टा की थी। उस दुष्ट कीचक को मार कर आज में उऋण हो जाऊंगा। और मुझे बड़ी शान्ति मिलेगी।

नोट:—यहां पर भी भीमसेन ने अपनी नहीं भाई की पत्नी ही कहा है। कि "भाई की पत्नी का अपहरण"।

ऐसा कह कर एवं सोच कर भीमसेन जी ने कीचक जो महाराजा विराट का साला था। उसका वध किया।

इससे बिलकुल स्पष्ट है कि द्रौपदी युधिष्ठिर की ही पत्नी थी।

छटा प्रमाण—यह भी है कि यदि द्रौपदी अर्जुन की पत्नी थी, तो युधिष्ठिर ने जुआ खेलते हुए उसको दाव पर कैसे लगा दिया? यदि वह पाचों की पत्नी थी, तो भी अन्यों से पूछे विना उसको नहीं लगाया जा सकता था।

युधिष्ठिर को अपनी ही पत्नी पर इतना अधिकार हो सकता था, अन्य वा अन्यों की पत्नी पर नही।

सातवां प्रमाण—जिस समय युधिष्ठिर ने जुआ खेला उस समय सबकी पृथक-पृथक पत्नियां विद्यमान थीं। युधिष्ठिर की पत्नी देविका थी, यदि द्रोपदी सबकी सांझी या अर्जुन की पत्नी होती तो युधिष्ठिर अपनी पत्नी को दाव पर न लगा कर अर्जुन की पत्नी को क्यों लगाते ? पांचों पाण्डवों की पृथक-पृथक पत्नियां एवं पृथक-पृथक पुत्र थे देखिये—

युधिष्ठिरस्तु गोवासनस्य शैब्यस्य, देविकां नाम कन्यां स्वयंवरे। तस्यां पुत्रंजनयामा, यौधेयं नाम ॥७६॥ भीमसेनोऽपि काश्यां बलन्धरां नामोपयेमे वीर्यशुल्काम्। तस्यां पुत्रं सर्वंगं, नामोत्पादयामास ॥७७॥ अर्जुन:खलु द्वारवतीं गत्वा भगिनी वासुदेवस्य सुभद्रां भद्रभाषिणी भार्यामुदावहत्। स्वविषयंचाभ्याजगाम कुशली। तस्या पुत्रमभिमन्युमतीव गुणसम्पन्नं दयितं वासुदेवस्याजनयत् ॥७८॥ नकुलस्तु चैद्यां करेणुमतीं नाम भार्यामुदावहत्। तस्यां पुत्रं निरमित्रं नामाजनयत् ॥७९॥ सहदेवोऽपि माद्रीमेव स्वयंवरे विजयां, नामोपयेमे मद्रराजस्य द्युतिमतो दुहितरम्। तस्यांपुत्रमजनयत् सुहोत्रं नाम ॥८०॥ भीमसेनस्तु पूर्वमेव हिडिम्बायां राक्षसं घटोत्कचं पुत्रमुत्पादयामास ॥८१॥ इत्येत एकादश पाण्डवानां पुत्राः। तेषां वशंकरोऽभिमन्युः ॥८२॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय ९५ श्लोक ७६ से ८२

अर्थात् युधिष्ठिर ने शिवि देश के राजा गोवासन की पुत्री देविका को स्वयंवर में प्राप्त किया। और उसके गर्भ से एक पुत्र को जन्म दिया। जिसका नाम यौधेय था। भीमसैन ने भी काशीराज की कन्या बलन्धरा के साथ विवाह किया, उसे प्राप्त करने के लिए बल एवं पराक्रम का शुल्क रक्खा गया था। अर्थात्
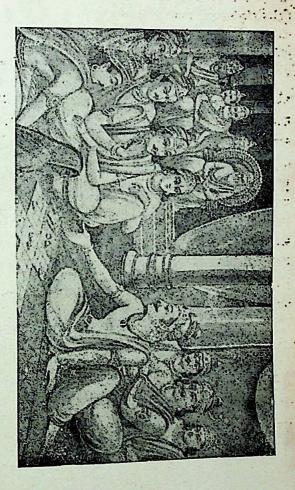
युधिष्ठिर द्वारा द्रौपदी को जुए में दाव पर लगाना

यह शर्त थी कि, जो अधिक बलवान हो, वही उसके साथ विवाह कर सकता है। भीमसेन ने उसके गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न किया, जिसका नाम् सर्वंग था। अर्जुन ने द्वारका में जाकर मंगलमय वचन बोलने वाली वासुदेव की बहिन सुभद्रा को पत्नी रूप में प्राप्त किया। और उसे लेकर कुशल पूर्वक अपनी राजधानी में चले आये। वहां उसके गर्भ से अतयन्त गुण सम्पन्न अभिमन्यु नामक पुत्र को उत्पन्न किया, जो वासुदेवनन्दन भगवान श्री कृष्ण को बहुत प्रिय था। नकुल ने चेदि नरेश की पुत्री करेणुमती को पत्नी रूप में प्राप्त किया। और उसके गर्भ से निरमित्र नामक पुत्र को जन्म दिया सहदेव ने भीमद्र देश की राजकुमारी विजया को स्वयम्वर में प्राप्त किया। वह मद्रराज द्युतिमान की पुत्री थी। उसके गर्भ से उन्होंने सुहोत्र नामक पुत्र को जन्म दिया। एवं भीमसेन ने पहले ही हिडिम्बा के गर्भ से घटोत्कच नामक राक्षस जातीय पुत्र को उत्पन्न किया था।

इस प्रकार ये पाण्डवों के ग्यारह पुत्र हुए इनमें से अभिमन्यु का ही वंश चला। आगे पुरुवंश की वंशावली दी गयी है। उसमें आप ध्यान से देख सकते हैं। नीचे प्रत्येक की गौण एवं मुख्य पत्नियों की तालिका के साथ-साथ पुत्रों की तालिका भी दी जाती है।

पाण्डवों के पुत्र एवं पत्नियों की तालिका—

क्रम	नाम	पत्नी	देश	राजा	पुत्र
१.	युधिष्ठिर	१. द्रोपदी (मुख्य) २. देविका (गौण)	पाञ्चाल शिवि	द्रुपद गोवासन	५ पुत्र योधेय
२.	भीमसेन	१. बलन्धरा (मुख्य) २. हिडिम्बा (गौण)	काशी जंगल	काशीराज जंगलीराक्षस (हिडिम्ब की बहिन)	सर्वंग घटोत्कच
३.	अर्जुन	१. सुभद्रा (मुख्य) २. उलूपी (गौण) ३. चित्रांगदा (गौण)	मथुरा अमेरीका मणिपुर	वसुदेव नागराज चित्र वाहन	अभिमन्यु इरावान् वभ्रुवाहन
४.	नकुल	१. करेणुमति (मुख्य)	मध्यप्रदेश	चेदी	निरमित्र
५.	सहदेव	१. विजया (मुख्य)	मद्रदेश	द्युतिमान्	सुहोत्र

एक और प्रमाण—पाण्डवों ने देखा कि जब तक द्रोणाचार्य जी नहीं मरेगें तब तक हमारी विजय असम्भव है। तो द्रौणाचार्य को मारने के लिए यह योजना बनाई गयी, कि उनको बताया गया कि उनका एक मात्र पुत्र अश्वत्थामा युद्ध में मारा गया है। पाण्डवों को विश्वास था कि अश्वत्थामा की मृत्यु सुनते ही द्रौणाचार्य जी हथियार डाल देगें ओर युद्ध से उपराम (छोड़ना) हो जायेंगे। परन्तु द्रौणाचार्य जी को किसी के कहने से यह विश्वास न हुआ कि अश्वत्थामा मारा गया है। उन्होंने कहा कि यदि युधिष्ठिर महाराज कहेंगे कि अवश्त्थामा मारा गया है तो विश्वास कर लिया जावेगा। युधिष्ठिर महाराज यह कहने को तैयार नहीं थे। क्योंकि यह असत्य था, वह कहते थे कि में झूठ नहीं बोलूंगा। तब अश्वत्थामा नाम के एक हाथी को मारा गया था, और युधिष्ठिर महाराज को कहा गया कि अब आप कह दीजिये कि अश्वत्थामा मारा गया, युधिष्ठिर महाराज ने कहा—"अश्वत्थामा हतो नरो व कुञ्जरो वा"। "अश्वत्थामा हतः" यह वाक्य द्रौणाचार्य जी ने सुन लिया, इस वाक्य के पूरा होते ही पाण्डवों की ओर से बड़े जोर से बाजे बजने लगे, और जोर-जोर से जयघोष होने लगे, "नरो वा कुञ्जरो वा" यह वाक्य सुनने ही नहीं दिया गया, द्रौणाचार्य अश्वत्थामा की मृत्यु को सुनते ही हथियार डालकर बैठ गये। पश्चात् महाराजा द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न ने द्रौणाचार्य जी का शिर तलवार से काट दिया।

अश्वत्थामा ने इसके प्रतिशोध स्वरूप रात्रि को पाण्डवों के शिविर में आक्रमण कर दिया, और युधिष्ठिर के पाचों पुत्रों को जो सोये हुए थे उनको काट दिया, क्योंकि आचार्य द्रौण के मारे जाने में कारण केवल युधिष्ठिर जी ही थे।

अब प्रश्न पैदा होता है कि—अगर द्रोपदी अर्जुन की पत्नी थी तो द्रोपदी के उन पांचों पुत्रों को अश्वत्थामा क्यों मारता? क्योंकि आचार्य द्रोण की मृत्यु में कारण अर्जुन नहीं था।

अतः सर्व प्रकार सिद्ध हो गया कि द्रौपदी के पांच पति नहीं केवल एक ही पति था और वह अर्जुन नहीं युधिष्ठिर ही था!

सामा सत्योक्तिः, परिपातु विश्वतः।
सत्यं वादिषम्, ऋतं वादिषम्॥

परमात्मा करे जो मैं सच्ची बात कहता हूँ वह सच्ची रहे अर्थात अज्ञानियों से परमात्मा मेरे सत्य की रक्षा करे।

महाराजा पुरू वंश के प्रमुख वीर राजाओं की नामावली—

दक्ष
|
अदिति
|
विवस्वान्
|
मनु
|
इला
|
पुरुखा
|
आयु
|
नहुष
|
ययाति
↓

↑

यदु द्रुह्यु पुरु अनु तुर्वसु

पुरु

जनमजय (प्रवीर)

प्राचिन्वान्

संयाति

अहंयाति

सार्वभौम

जयत्सेन

अवाचीन

अरिह

महाभौम

अयुतनायी

अक्रोधन

देवातिथि

अरिह

↓

ऋक्ष
मतिनार
तंसु
ईलिन
दुष्यन्त
भरत
भुमन्यु
सुहोत्र
हस्ती
विकुण्ठन
अजमीढ़
संवरण (कुरुवंश के प्रवर्तक)
कुरु
विदूर

अनश्वा
परिक्षित
भीमसेन
प्रतिश्रवा
प्रतीप
देवापि
शान्तनु
बाह्लीक
विचित्र वीर्य
देवव्रत (भीष्म)
चित्रांगद
(व्यास से नियोग द्वारा)
धृतराष्ट्र
पाण्डु
विदुर
(व्यास जी के वरदान से एक सौ पुत्र, जिनमें मुख्य चार हैं)
(धर्मराज एवं वायु व अश्विनि कुमारों के नियोग से)
चित्रसेन
विकर्ण
दु:शासन
दुर्योधन
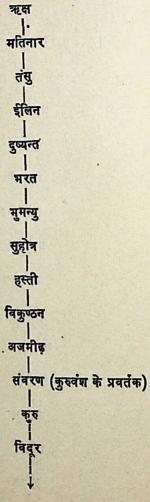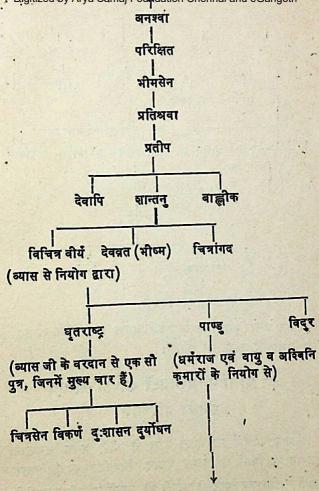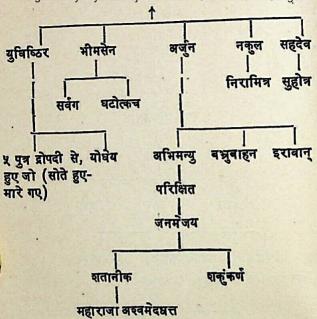
इस प्रकार यह महाराजा पुरु के प्रमुख वशंज वीर राजाओं की नामावली प्रस्तुत की गई हैं।

धर्म ग्रन्थों में मिलावटों का कारण एवं उनका परिणाम

भारतवर्ष में महाभारत काल से पीछे अनेक सम्प्रदाय उत्पन्न हुए जिनमें शैव, शाक्त, वैष्णव, जैन, बोद्ध मुख्य हैं। पुस्तकें हाथों से लिखकर तैयार की जाती थी, छपती नहीं थी, ऊपर लिखे

सम्प्रदायों के कथा वाचकों, मतों के प्रचारकों, उनके नेताओं आदि ने अपने-अपने मत की प्रतिष्ठा, अपने-अपने मन्तव्यों के प्रचार एंव अपने माने हुए पूज्यों की प्रंशसा तथा जिन मतों को नहीं मानते उनके प्रवर्तकों तथा मन्तव्यों की निन्दा के लिए अनेक प्रकार के श्लोकों की रचना करके धर्म ग्रन्थों में मिला दिया।

अपने मत की प्रशंसा में तथा अपने इष्ट देवों के झूठे चमत्कारों की झूठी कहानियाँ बना-बना कर अपने पास वाले ग्रन्थों में मिलावटें कर दी, अन्य मतों के माने हुए देवी, देवताओं, और ऋषि-मुनियों की घोर निन्दा में भांति-भांति के श्लोक बनाकर रख दिये। शैवों ने शिव की प्रशंसा की सीमा नहीं रक्खी और साथ ही ब्रह्मा, तथा विष्णु की निन्दा जितनी वह कर सकते थे की और शाक्तों ने तो किसी को भी नहीं छोड़ा ब्रह्मा, विष्णु और शिव सभी से देवी के लिए हाथ जुडवा दिये। और विष्णु जी की तो मिट्टी ही पीट दी। जिसकी प्रशंसा करने लगे उसको दुनियाँ भर के जादूगरों का बाप बना दें। कोई दुनियाँ भर का ऐसा काम नहीं है, जिसे उसके संकेत मात्र से न करा दें। कोई ऐसा शक्तिशाली न छोड़ें जिसको उसके चरणों में न गिरा दें, जिसकी निन्दा करने लगें, कोई बुरे से बुरा काम नहीं जिसको उससे न करा दें।

जैनों और बौद्धों ने भी हमारे ग्रन्थों को भृष्ट करने में कोई कमी नहीं छोड़ी। शाक्तों के ही सगे भाई वाम मार्गी है, उन्होंने किसी राजा-महाराजा को ऐसा नहीं छोड़ा और न किसी ऋषि, महर्षि, मुनि को ही छोड़ा जिसे घोर दुराचारी, व्यभिचारी न

बना दिया हो, राजों-महाराजों से बकरे मरवा कर अजमेध यज्ञ करवा दिये। घोड़े मरवा कर अश्वमेध यज्ञ करवा दिये, गौवों के रुधिर से नदियाँ बहा दी, और गौवों की हड्डियों के पहाड़ बनवा दिये। एक-एक राजा दो-दो हजार गौवें नित्य भोजनालय के लिए मारने वाला बता दिया, यहीं तक्क नहीं एक-एक राजा से लाखों-लाखों और करोड़ों-करोड़ों गौवों की हत्या करवा दी। ब्राह्मणों, ऋषियों, मुनियों और महर्षियों को भी गौमांस खाने वाला बना दिया। मनुष्य की शक्ति को बढ़ा-चढ़ा कर बताने लगे तो वृक्षों को उखाड़ कर फैंकने वाला तथा किसी को हाथियों को उठा-उठा कर फैंकने वाला बता दिया। यहाँ तक की पहाड़ों को उखाडने व उठाने वाला किसी-किसी को बता दिया शुक्राचार्य की संजीवनी विद्या की प्रशंसा करने लगे तो जिसका मांस पकाकर मनुष्यों को खिला दिया, उसको पेट में से जीवित निकलवा दिया, कुत्तों को मांस खिला दिया तो कुत्तों के पेटों में से उसको जीवित करके निकलवा दिया। जिस मनुष्य के मांस को जलाकर शराब या किसी और वस्तु में मिलाकर पिला दिया तो भी जीवित करके निकलवा दिया। शाप का वर्णन करने लगे तो शाप के बल से मनुष्य को पशु पक्षी, सिंह व्याघ्र, गिरगिट जो चाहें बनवा दें। और वरदान का वर्णन करने लगे तो सम्भव, असम्भव की सारी सीमाओं को उलंघन कर जायें। प्रयोजन यह है कि, ग्रन्थों में मिलावट करने वालों ने ग्रन्थों में ऐसी मिलावटें कर दी। पढ़ने और सुनने वालों को उसमें से सत्यासत्य को पृथक-पृथक करना अति कठिन हो गया। उसका कुफल यह हुआ कि-ईसाइयों और मुसलमानों को हमारे महापुरूषों की निन्दा करने के लिए असंख्य प्रमाण मिल

गये। शिव परीक्षा, विष्णु परीक्षा, गणेश परीक्षा, आदि पुस्तकें लिखकर ईसाइयों ने हमारे महापुरूषों की घोर निन्दा की।

जैनियों की एक पुस्तक मैंने देखी थी, उसका नाम था, "भीमज्ञान त्रिशंका" कोई बुरे से बुरा लांछन ऐसा नहीं था, जो उस पुस्तक में पुराणों, स्मृतियों ग्रह्यसूत्रों के प्रमाणों से ऋषियों मुनियों और महर्षियों पर नहीं लगाया गया। कोई ऐसा पाप नहीं जिसका विधान संस्कृत के ग्रन्थों में न बताया हो।

इस मिलावट का घोर कुपरिणाम यह हुआ कि-लोगों को केवलपुराणों को ही नहीं हमारे पवित्र ग्रन्थ रामायण और महाभारत को भी कपोल-कल्पित और झूठीकहानियों के ग्रन्थ बताने का अवसर मिला। यहाँ तक की इनको उपन्यास बताने लगे।

हमारे ये दोनों ग्रन्थ शिक्षाओं के अथाह सागर और अद्भुत एवं अनुपम इतिहास हैं। इनमें जो महापुरूषों के आचार है उनकी संसार के इतिहासों में उपमा नहीं मिलती है।

पहले योरुप के रिसर्चस्कालरों ने इनको कल्पित झूंठी कहानियों के ग्रन्थ बताये, फिर भारत के नामधारी रिसर्चस्कालरों को भी एसा ही कहने का साहस हो गया। और स्कूलों- कालिजों तथा यूनिवर्सिटी द्वारा शिक्षा पाये हुए युवकों का इन इतिहासों पर विश्वास रहना ही कठिन हो गया।

इस गिरे हुए समय में भी किसी सभ्य जन समुदाय में एक स्त्री के एक समय में दो पति नहीं होते हैं। और हमारे आदर्श पुरूष एक स्त्री के पांच पति बना दिये गये, धिक्कार है!

वैदिक धर्म का—

"अमर स्वामी परिव्राजक"

परिशिष्ट भाग

कौन कहता है द्रौपदी के पाँच पति थे ?

नोट :—आर्य मर्यादा २७ जून सन् १९७१ में विद्वद्वर श्री पं० जगदेव सिंह जी सिघान्ती शास्त्री (भूतपूर्व ससंद सदस्य) का लेख छपा था। जिसका शीर्षक था—

"द्रोपदी अर्जुन की स्त्री थी"

श्री सिद्धान्ती जी का अध्ययन प्रशंसा के योग्य हैं, उन्होंने इस लेख में प्रायः उन सब श्लोकों को इकट्ठा कर दिया था जिनसे यह भ्रान्ति हो सकती थी कि "द्रौपदी अर्जुन की स्त्री थी"।

मैं यह नहीं समझता हूँ कि श्री सिद्धान्ती जी को यह भ्रान्ति थी या हो सकती है। उन्होंने तो सबके लिए इस उलझे हुए विषय को सुलझाने (स्पष्ट) कराने की दृष्टी से इन श्लोकों का संग्रह करने का कष्ट किया था।

मैंने भी उसी समय क्रमशः आर्य मर्यादा समाचार पत्र में चार लेखों में इस विषय को स्पष्ट कर दिया था। जो आगे दिये गये हैं। आप भी उनको पढ़िये एवं ध्यान दीजिये !
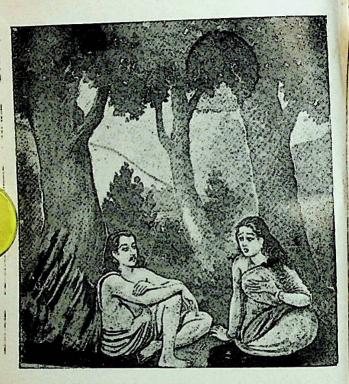
क्या द्रौपती अर्जुन की पत्नी थी ?

द्रौपदी द्वारा भीमसेन को अपना कष्ट बताना

क्या द्रौपदी अर्जुन की पत्नी थी ?

ऐतिहासिक विवेचन]–[आर्य मर्यादा २९ अगस्त सन् १९७१ ई०

मैंने उन श्लोकों को पहले भी देखा था और अब फिर अधिक ध्यान से देखा है। उनमें से एक भी श्लोक मुझको ऐसा दिखाई नहीं दिया, जिससे "द्रोपदी अर्जुन की स्त्री सिद्ध होती हो"।

अर्जुन ही द्रौपदी का पति और द्रौपदी अर्जुन की ही पत्नी होनी चाहिये। यह भाव स्वाभाविक रूप से सबके हृदयों में इस कारण उत्पन्न होता है, कि-अर्जुन ने ही द्रुपद की उस शर्त को पूरा किया था। जिसको पूरा करने पर द्रौपदी का विवाह निंभर था, सामान्य रूप से यह बात हृदय में उतरती नहीं, कि-विवाह की शर्त तो पूरी करे अर्जुन, और विवाह द्रौपदी के साथ हो जाय युधिष्ठिर का।

यह भावना ही थोड़ी-थोड़ी भ्रान्ति उत्पन्न करने वाले श्लोकों को भी पुष्ट प्रमाण मानने के लिए बहुतों को विवश कर देती है। (वादे-वादे जायते तत्वबोध:) "

मैं इस उक्ति पर विश्वास करता हुआ उन सब श्लोकों पर फिर से विचार करता हूँ।

(१) भीमसेन ने कीचक को मारने के बाद कहा है—

अद्याहमनृणो भूत्वा भ्रातु-,
भार्याहारिणम्।

शांतिं लब्धास्मि परमां,
हत्वा सैरन्ध्रिकण्टकम् ॥७६॥

महाभारत विराट पर्व अध्याय २२ श्लोक ७६,

भीमसेन ने इस स्थान में द्रोपदी को अपने भाई की पत्नी कहा है, स्पष्ट है कि, द्रौपदी भीमसेन की पत्नी नहीं थी, पर अर्जुन की स्त्री थी, यह तो इस श्लोक से सिद्ध नहीं हुआ, सिद्ध यह हुआ कि—द्रौपदी भीमसेन के किसी भाई की स्त्री थी, पर किस भाई की पत्नी थी ? इसका उत्तर द्रोपदी के अपने ही वचन में पहले ही आ चुका है। जब पाण्डव लोग राजा विराट के यहां वेश वदल कर रह रहे थे, तो राजा विराट का साला कीचक द्रौपदी के लिए बुरी भावना रखता था, उसे परेशान करता था, इससे दुःखी होकर द्रौपदी भीमसेन के पास आई, और भीमसेन ने द्रोपदी से दुःख का कारण पूछा, तब द्रौपदी ने कहा—

अशोच्यत्वं कुतस्तस्य,
यस्या भर्ता युधिष्ठिरः।
जानन् सर्वाणि दुःखानि,
किं मां त्वं परिपृच्छसि ॥१॥

महाभारत विराट पर्व अध्याय १८ श्लोक १,

जिसके पति युधिष्ठिर है उसके लिए शोक रहित होना असम्भव है। द्रोपदी व भीमसेन को पृष्ठ १६६ में वार्ता करते हुए दिखाया गया है। यदि द्रौपदी का पति अर्जुन होता, तो यह "यस्या भर्ता युधिष्ठिर" के स्थान में "यस्याभर्ताधनञ्जयः" अथवा "यस्या-भर्ता बृहनला" कहने में क्या आपत्ति थी।

जैसे स्पष्ट प्रमाण युधिष्ठिर के पक्ष में हैं, ऐसा स्पष्ट एक भी प्रमाण अर्जुन के पति होने के पक्ष में नहीं हैं। पर मछली जो

भीमसेन द्वारा कीचक वध
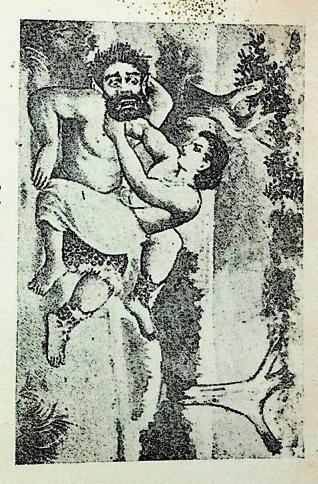
अर्जुन ने अपने बाण से वेधी थी, वह उन स्पष्ट प्रमाणों को दीखने नहीं देती हैं। वह उनको आड़ में करके स्वयं सामने आ जाती है। और प्रमाण देखिये—

अथाब्रवीद् राजपुत्रीं,
कौरव्यो "महिषी" प्रियाम्।
केनास्यर्थेन सम्प्राप्ता,
त्वरितेव ममान्तिकम् ॥१७॥

महाभारत विराट पर्व अध्याय १७ श्लोक १७,

इस श्लोक में द्रौपदी को "महिषी" भी कहा है, महिषी उसी को कहा जाता है, जो महाराजा की पत्नी हो अर्थात महारानी हो, महिषी युधिष्ठिर की पत्नी ही हो सकती है, क्योंकि युधिष्ठिर ही महाराजा थे।

२. युधिष्ठिर महाराज का वचन है—

त्वया जिता फाल्गुन याज्ञसेनी
त्वयैव शोभिष्यति राजपुत्री।
प्रज्वालिताग्निरमित्रसाह,
गृहाण पाणिं विधिवत्त्वमस्याः ॥७।

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९० श्लोक ७,

हे अर्जुन ! तैने ही राजपुत्री द्रौपदी को जीता है। यह तेरे ही साथ शोभित होगी। तू ही अग्नि के समक्ष इसका पाणिग्रहण कर।

अर्जुन के पक्ष में यह पुष्ट प्रमाण है, पर अर्जुन का उत्तर और आगे वृत्तान्त इसका सर्वथा खण्डन कर देता है, पढ़िये और

विचारिये ! अर्जुन ने कहा—

मा मां नरेन्द्र त्वमधर्मभाजं,
कृथा न धर्मोऽयं शिष्टदृष्टः।
भवान् निवेश्यः प्रथमं ततोऽयं,
भीमोमहाबाहुरचिन्त्यकर्मा ॥८॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९० श्लोक ८,

हे महाराज ! आप मुझको अधर्म का भागी न बनाइये। बड़े भाई के विवाह से पहले छोटे भाई का विवाह हो जाये यह धर्म नहीं हैं। यह तो अशिष्टों (अनार्यों) में ही देखा गया है। (आर्यों में नहीं) पहले आपका विवाह होना चाहिये। फिर भीमसेन का, पश्चात्त मेरा, (इसी प्रकार क्रमशः छोटे भाइयों के) मनुस्मृति में बड़े भाई से पहले अगर छोटा भाई विवाह कर ले तो उसकी बड़ी निन्दा की गयी है, देखिये—

दाराग्नि होत्र सयोगं,
कुरुते योऽग्रजेस्थिते।
परिवेत्ता स विज्ञेयः,
परिवित्तिस्तु पूर्वजः ॥१७१॥
परिवित्तिः परिवेत्ताः,
यथा च परिविद्यते।
सर्वेते नरकंयान्ति,
दातृ याजक पंचमा ॥१७२॥

मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १७१, १७२,

परिवित्ति, परिवेत्ता जिस कन्या से विवाह करें वह कन्या

तथा कन्या के देने वाला एवं याज्जक (पुरोहित) ये पाचों नरक में जाते हैं। (विस्तार से इन श्लोकों का अर्थ हम पीछे दे आये आये हैं, वहां देख लें)। यहां स्पष्ट है कि अर्जुन ने द्रौपदी के साथ विवाह करने से साफ इन्कार कर दिया। और युधिष्ठिर महाराज को ही कह दिया कि—आप ही इसके साथ विवाह करिये! महाराजा युधिष्ठिर ने राजा द्रुपद को कहा कि—

वयं हि क्षत्रिया राजन्,
पाण्डो पुत्रा महात्मनः।
ज्येष्ठं मां विद्धि कौन्तेयं,
भीमसेनार्जुना विमौ॥९॥
आभ्यां तव सुता राजन्,
निर्जिता राज संसदि।
यमौ च तत्र कुन्ती च,
यत्र कृष्णा व्यवस्थिता॥१०॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक ९, १०,

हे राजन् हम लोग महाराजा पाण्डु के पुत्र क्षत्रिय ही हैं, मैं कुन्ती का बड़ा पुत्र हूं। ये दोनों भीमसेन और अर्जुन हैं। इन दोनों ने ही द्रौपदी को सभा के बीच राजाओं के समूह में जीता है। और माता कुन्ती राजकुमारी कृष्णा के पास गयी है।

युधिष्ठिर का आगे फिर कहा गया वचन—

तमब्रवीत् ततो राजा,
धर्मात्मा च युधिष्ठिरः।
ममापि दार सम्बन्धः,

कार्यस्तावद् विशापते ॥२१॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक २१,

हे राजन् ! मुझे युधिष्ठिर कहते हैं, अभी मेरा भी विवाह नहीं हुआ है। अर्थात् मेरा भी विवाह सम्बन्ध करने योग्य है। इस कारण अर्जुन विवाह नहीं करेगा, आप उचित समझें तो द्रौपदी का विवाह मेरे साथ कर दें।

नोट:—महाराजा द्रुपद को इसमें क्या आपत्ति हो सकती थी,? प्रथम लाभ यह हो गया कि,—पाण्डवों से सम्बन्ध हो गया, दूसरा लाभ उससे बड़ा यह भी हो गया कि—युधिष्ठिर के साथ विवाह होने से द्रौपदी महारानी हो जायेगी। क्योंकि राज्य मिलने पर महाराजा तो युधिष्ठिर ही बनेंगे, अर्जुन कभी महाराजा नहीं बन सकता। ऐसा सोचकर महाराजा द्रुपद ने युधिष्ठिर को तत्काल कह दिया कि—

भवान् वा विधिवत् पाणिं
गृह्णातु दुहितुर्मम।
यस्य वा मन्यसे वीर,
तस्य कृष्णा मुपादिश ॥२२॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक २२,

हे वीर आप जैसा चाहें करें, चाहे अपने भाइयों में से किसी के साथ करें। अन्यथा आप खुद ही विधिवत् मेरी पुत्री कृष्णा का पाणिग्रहण करें।

आगे कहा है—

ततोऽब्रवीद् भगवान धर्मराज,
मद्यैव पुण्याहमुत वः पांडवेय।

महाराजा द्रुपद द्वारा द्रौपदी के विवाह में दिया गया धन

युधिष्ठिर का द्रौपदी के साथ-धौम्य ऋषि द्वारा विवाह संस्कार।

अद्य पौष्यं योगमुपैति चन्द्रमाः,
पाणिं कृष्णायास्त्वं गृहाणपूर्वम् ॥५॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९७ श्लोक, ५,

महर्षि व्यास ने धर्मराज युधिष्ठिर से कहा—कि हे पाण्डु-नन्दन ! तुम लोगों के लिए आज ही पुण्य दिवस है। आज चन्द्रमा भरण-पोषण कारक पुण्य नक्षत्र पर जा रहे हैं। इस लिए आज ही पाणिग्रहण करो।

युधिष्ठिर का द्रौपदी के साथ विवाह

ततः समाधाय स वेद पांरगो,
जुहाव मन्त्रैर्ज्वलितं हुताशनम् ।
युधिष्ठिरं चाप्युपनीय मन्त्रवि-
न्नियोजयामास सहैव कृष्णया ॥११॥
प्रदक्षिणं तौ प्रगृहीतपाणी,
समानयामास स वेदपारगः ।
ततोऽभ्यनुज्ञाय तमाजिशोभिनं,
पुरोहितो राजगृहाद् विनिर्ययौ ॥१२॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९७ श्लोक ११, १२,

पश्चात् वेद के पारंगत विद्वान मन्त्रज्ञ पुरोहित धौम्य ने वेदी में प्रज्वलित अग्नि की स्थापना करके मन्त्रों के साथ आहुति दी और युधिष्ठिर को यज्ञोपवीत देकर उनका द्रौपदी के साथ ग्रन्थि-बन्धन कर दिया, और पुरोहित धौम्य राजभवन से बाहर चले गये। वेदों के पूर्ण विद्वान पुरोहित धौम्य ने दोनों का पाणिग्रहण

करा के उनसे अग्नि की परिक्रमा कराई, पुनः विवाह की सप्तपदी आदि पूरी विधि करा के युधिष्ठिर और द्रौपदी का विवाह सम्पन्न कर दिया। पश्चात् संग्राम में शोभा पाने वाले युधिष्ठिर को छुट्टी देकर पुरोहित जी राजभवन से बाहर चले गये।(क्रमशः)

[आर्य मर्यादा ५ सितम्बर सन् १९७१ ई०

विवाह तो द्रौपदी का युधिष्ठिर के साथ हुआ, स्त्री अर्जुन की कैसे हो गयी? केवल लक्ष्यवेध करने से तो स्त्री नहीं बन सकती थी, हाँ अधिकार हो गया था, परन्तु असली सर्टीफिकेट तो विवाह संस्कार का बाकी था, जिसके बिना पत्नी हो ही नहीं सकती थी, महाभारत में कहीं द्रौपदी का विवाह अर्जुन के साथ लिखा देखा नहीं, किन्हीं ने देखा हो तो मुझे भी दिखा दे,।

श्री राम जी ने जनकपुरी में धनुष तोड़ने की शर्त पूरी कर दी थी, तो क्या सीता इतने से ही, श्री राम जी की, पत्नी हो गयी थी, ? नहीं-नहीं विधिपूर्वक विवाह हुआ था। बाल्मीकिय रामायण में बिल्कुल स्पष्ट लिखा हुआ है। इसी प्रकार केवल लक्ष्य वेध करने से ही, बिना विवाह किये, द्रौपदी अर्जुन की स्त्री कैसे बन गयी?

मण्डपो मधुपर्कश्च,
लाजाहोमस्तथैव च।
यावत् सप्तपदी नास्ति,
तावत्कन्या कुमारिका ॥ ॥

तथा मनुस्मृति में कहा है—"पतित्वं सप्तमें पदे"।

सप्तपदी होने पर ही वधू पत्नी बनती है। और तभी वर पति बनता है। इस प्रकार विधिवत् द्रौपदी युधिष्ठिर की पत्नी

बनी और युधिष्ठिर द्रौपदी के एकमात्र पति बने।

अब मैं श्री सिद्धान्ती जी के दिये हुए अन्य श्लोकों को भी विचार की कसौटी पर कसता हूं।

३. अर्जुन जब धनुर्विद्या सीखने को इन्द्र के पास तिब्बत को जाने लगे, तब द्रौपदी ने अर्जुन के लिए शुभ कामनाएं की। इससे यह कैसे सिद्ध हो गया कि द्रौपदी अर्जुन की स्त्री थी? क्या युधिष्ठिर की स्त्री को अर्जुन के लिए शुभकामनाएं नहीं करनी चाहिये थी? युधिष्ठिर की स्त्री अर्जुन के लिए शुभकामना करे तो क्या कोई पाप है? बड़ी भाभी थी अर्जुन ने उससे आज्ञा ली तो क्या बुरा हुआ? और द्रौपदी ने यह कह दिया कि, "स्वस्ति प्राप्नुहि भारत" ३७।३१ और स्वस्ति गच्छ ह्यनामयम् ३१।३२ वन पर्व (महाभारत) में कहा है कि आपका कल्याण हो, और कुशल पूर्वक प्रस्थान करो। तो इसमें पत्नी पन की क्या बात हुई। बड़े भाई की पत्नी जो माता के समान थी उससे आज्ञा लेना, और स्वीकृति देते समय उसके द्वारा आर्शीवाद का दिया जाना और भी शोभनीय तथा सभ्यता और शिष्टाचार युक्त है।

जिस समय अर्जुन धनुर्विद्या सीखने के लिए तिब्बत इन्द्र के पास जाने लगे तो बड़ी भाभी के नाते द्रौपदी ने आर्शीवाद रूप में निम्न वचन कहे—

जीवितं मरणं चैव,
राज्यमैश्वर्यमेव च।
आपृष्टोमेऽसि कौन्तेय,
स्वस्ति प्राप्नुहि भारत ॥३१॥

प्रयाह्यविघ्नेनैवाशु,
विजयाय महाबल ।
नमो धात्रे विधात्रे च,
स्वास्ति गच्छह्यनामयम् ।।३२।।

महाभारत वन पर्व अध्याय ३७ श्लोक ३१, ३२,

हे पार्थ ! हम सबके सुख, दुख, जीवन, मरण तथा राजएश्वर्य आप पर ही निर्भर है। भरत कुल तिलक, कुन्ती कुमार ! मैंने आपको विदा दी, आप कल्याण को प्राप्त हों। आप विघ्न बाधाओं से रहित होकर विजय प्राप्ति के लिए शीघ्र यात्रा कीजिए धाता। और विधाता को नमस्कार है, आप कुशल और स्वस्थता पूर्वक प्रस्थान कीजिए।

नोट:—इसमें द्रोपदी ने पत्नी पन की कौन सी बात कह दी ?

४. अर्जुन देर तक इन्द्र के पास तिब्बत में रहे तो द्रोपदी ने युधिष्ठिर से कहा कि—

तमृते पुण्डरीकाक्षं,
काम्यकं नातिभाति मे ।
न लेभे शर्म वै राजन्,
स्मरन्ती सव्यसाचिनम् ।।१५।।

महाभारत वन पर्व अध्याय ८० श्लोक, १५,

हे महाराज ! सव्यसाची कमल त्र अर्जुन के बिना यह वन अच्छा नहीं लगता, और उसको याद करती हुई मुझको सुखालाभ नहीं होता है।

इन वाक्यों में कौन सा ऐसा शब्द है, जिनमें द्रोपदी अर्जुन

की स्त्री सिद्ध हो गयी। वहां तो कहा गया है कि—

तमृतेते नर व्याघ्राः,
पाण्डवा जनमेजय।
मुदम प्राप्तुवन्ता वे,
काम्यके न्यवसंस्तदा ॥७॥

महाभारत वन पर्व अध्याय ८० श्लोक ७;

अर्जुन के विना वे नर व्याघ्र पाण्डव आनन्द शून्य होकर काम्यक वन में रह रहे थे। इससे पहले पाचवें श्लोक में कहा गया है कि—

आक्षिप्तसूत्रा मणयश्छिन्न,
पक्षा इव द्विजाः।
अप्रीत मनसः सर्वे,
बभूवुरथ पाण्डवाः ॥५॥

महाभारत वन पर्व अध्याय ८० श्लोक ५,

जैसे मणियों की माला टूट जाये, या पक्षियों के पंख कट जाये, ऐसी अवस्था अर्जुन के विना पाण्डवों की हो रही थी।

अर्जुन के विना भीमसेन की दशा—

निष्काङ्ग वक्रतापीड़ो,
पञ्चशीर्षा विवोरगो।
तमृते पुरुष व्याघ्रं,
नष्ट सूर्य मिवाम्बरम् ॥१६॥
तमृते फाल्गुनं वीरं,
न लभे काम्यके धृतिम्।

पश्यामि च दिशः,
सर्वास्तिमिरेणावृता इव ॥२२॥

महाभारत वन पर्व अध्याय ८० श्लोक १६, २२,

भीमसेन कहते हैं, कि—अर्जुन के विना आज यह वन सूर्य हीन आकाश के समान श्री हीन दिखलाई देता है। उन वीरवर अर्जुन के विना हमें काम्यक वन में धैर्य नहीं प्राप्त हो रहा है। मुझे सारी दिशायें अन्धकार से आच्छन्न सी दिखाई देती है। भीमसेन की यह बातें सुन कर आखों में आंसु भरकर—नकुल कहते हैं—

तमृते भीमधन्वानं,
भीमादवरजं बने।
कामये काम्यके वासं
नेदानीम मरोमपम् ॥२६॥

महाभारत वन पर्व अध्याय ८० श्लोक २६,

भीमसेन से छोटे अपने देवोपम भाई के बिना इस काम्यक वन में मेरी रहने की इच्छा नहीं रही है।

सहदेव कहते हैं—

तस्य जिष्णों वृषी द्रष्टवा,
शून्यामिव निवेशने।
हृदयं मे महाराज न,
शाम्यति कदाचन् ॥२६॥

महाभारत वन पर्व अध्याय ८० श्लोक २६,

हे महाराज ? उन विजयी भ्राता अर्जुन के आसन को कुटिया

में सूना-सूना देखकर मेरे हृदय को शान्ति नहीं मिलती है। अब यह वन अच्छा नहीं लगता है—आदि—२ !

यही बात युधिष्ठिर पत्नी द्रौपदी को भी कहनी ही चाहिये थी, देवर को याद करने मात्र से द्रौपदी उसकी स्त्री हो गयी ? क्या भाभी देर से परदेश में गये हुए अपने प्यारे देवर की याद में इतने शब्द भी नहीं कह सकती है ? भाई भी कह रहे हैं, भाभी भी कह रही है, केवल पत्नी ही याद कर सकती है, अन्य कोई नहीं यह बहुत थोथी कल्पना है ।

५- अत्यन्त स्पष्ठ प्रमाण —यहां तीन बताये गये हैं, यथा—

मां मावमंस्था द्रौपदीतल्पसंस्थो,
महारथान् प्रतिहन्मि त्वदर्थे ।
तेनातिशङ्की भारत निष्ठुरोऽसि,
त्वत्तः सुखं नाभिजानामि किंचित् ॥१४॥

उत्थाय तस्माच्छयनादुवाच,
पार्थं ततो दुःखपरीतचेताः ।
कृतं मया पार्थ यथा न साधु,
येन प्राप्तं व्यसनं वः सुघोरम् ॥४३॥

तस्माच्छिरश्छिन्धि ममेदमद्य,
कुलान्तकस्याधमपूरुषस्य ।
पापस्य पापव्यसनान्वितस्य,
विमूढबुद्धेरलसस्य भीरोः ॥४४॥

महाभारत कर्ण पर्व अध्याय ७० श्लोक १४, ४३, ४४,

अर्जुन ने युधिष्ठिर का अपमान करते हुए कहा—कि तू

द्रौपदी की शैय्या पर बैठा-बैठा मेरा अपमान न कर, मैं तेरे ही लिए बड़े-बड़े, महारथियों का संहार कर रहा हूँ। इसी से तू मेरे प्रति अधिक संदेह करके निष्ठुर हो गया है। तुझसे कोई सुख मिला हो इसका मुझे स्मरण रहीं है। .

अर्जुन द्वारा अपमान किये जाने के पश्चात युधिष्ठिर जी महाराज दुःख से व्याकुल चित्त होकर उस शैय्या से उठ गये, और अर्जुन से इस प्रकार बोले—

कुन्तीनन्दन ! अवश्य ही मैंने अच्छा कर्म नहीं किया है, जिससे तुम लोगों पर अत्यन्त भयंकर संकट आ पड़ा है।

मैं कुलान्तकारी, नराधम पापी, पापमय दुर्व्यसन में आसक्त मूढ़बुद्धि आलसी और डरपोक हूं। इसलिए आज तुम मेरा यह मस्तक काट डालो। इसी के आधार पर श्री सिद्धान्तीजी के लेख में लिखा है कि—इन प्रमाणों से अति स्पष्ट है कि द्रौपदी अर्जुन की स्त्री थी, अर्जुन स्वयं कहता है, और द्रौपदी के साथ शयन करने के पाप में उसको धिक्कारता है।

इस सन्दर्भ को पढ़कर मेरा हृदय कांप गया, मुझको इतना दुःख हुआ कि उसका वर्णन करने में असमर्थ हूं। सम्मानीय सिद्धान्तीजी की लेखनी से ये वाक्य किस प्रकार लिखे गये, मैं समझ न सका।

महाराज युधिष्ठिर परस्त्री गामी थे अनुज की वधू जो पुत्री और पुत्र वधू के समान होती है। उसके साथ व्यभिचार करते थे। आश्चर्य !! महदाश्चर्य !!!

यह तो अभूतपूर्व सर्वथा अनूठी और अछूती कल्पना है। यदि

यह सब सत्य हो तो युधिष्ठिर भी धिक्कार के योग्य है। और सबसे अधिक धिक्कार के योग्य है अर्जुन ! जिसके लिए इस लेख से इतनी बातें स्पष्ट निकलती हैं। आज क्रोधावेश में अर्जुन-युधिष्ठिर को धिक्कारता है। पर उसको बहुत पहले से इस बात का पता था कि, युधिष्ठिर द्रौपदी के साथ व्यभिचार करता हैं, और केवल पता ही नहीं था, बल्कि उसकी स्वीकृति से ही यह सब पाप होता था। क्योंकि इसी लेख में अर्जुन का वचन है कि—

> यतेहि नित्यं तव कर्तुमिष्टं,
> दारैः सुतैर्जीवितेनात्मना च।
> एवं यन्मां वाग्विशिखेन हंसि,
> त्वत्तः सुखं न वयं विद्म किंचित् ॥१३॥

महाभारत कर्ण पर्व अध्याय ७० श्लोक १३,

अर्जुन ने महाराज युधिष्ठिर को कहा कि मैं सदा "स्त्री" पुत्र जीवन और यह शरीर लगाकर तेरा प्रिय कार्य सिद्ध करने के लिए प्रयत्नशील रहता हूं, ऐसी दशा में भी तू मुझे अपने वाग्बाणों से मार रहा है, हम लोग तुझसे थोड़ा सा भी सुख न पा सके। लाख बार धिक्कार है, उसको जिसने अपनी स्त्री अपने बड़े भाई को व्यभिचार के लिए सुपुर्द कर रक्खी है। और कभी इस पाप को बुरा न मानता हुआ आज क्रोध में बड़े भाई को धिक्कारता है।

बात वास्तव में यह नहीं है, जो इस सन्दर्भ में प्रकट की गई है अर्जुन युद्ध कर रहे थे, दोपहर के समय महाराज युधिष्ठिर की कुशल जानने के लिए अर्जुन की प्रबल इच्छा हुई। अर्जुन ने

भीमसेन को कहा है कि भैया आप महाराज के पास जाइए। और उनके कुशल समाचार ले आइये। मुझको उनके विषय में कुछ चिन्ता हो रही है। भीमसेन ने कहा कि मैं इस समय युद्ध कर रहा हूं। यदि मैं जाऊंगा तो शत्रु लोग मुझको भागा हुआ कहेंगे। इसलिए हे अर्जुन तुम ही जाओ तब अर्जुन ने श्रीकृष्णजी को कहा। क्रमशः

[आर्य मर्यादा १२ सितम्बर सन् १९७१ ई०]

चोदयाश्वान् हृषीकेश,
विहायैतद् बलार्णवम्।
अजात शत्रुं राजानं,
द्रष्टुमिच्छामि केशव ॥१३॥

महाभारत कर्ण पर्व अध्याय ६५ श्लोक १३,

हे केशव! मैं अजात शत्रु महाराजा युधिष्ठिर के दर्शन करना चाहता हूं। आप शीघ्र रथ ले चलिये। श्रीकृष्ण जी रथ को लेकर महाराजा युधिष्ठिर के पास पहुंचे, दोनों ने रथ से उतर कर युधिष्ठिर महाराज के चरणों में प्रणाम किया और कहा—

मन्यमानो हतं कर्णं,
धर्मराजो युधिष्ठिरः।
हर्षगद्गदया वाचा,
प्रीतः प्राह परंतपः ॥२०॥

महाभारत कर्ण पर्व अध्याय ६५ श्लोक २०,

युधिष्ठिर महाराज ने समझा कि अर्जुन कर्ण को मारकर आये हैं, वे बहुत प्रसन्न होकर बोले कि अर्जुन तुम धन्य हो, तुमने कर्ण को मार दिया, वह दुष्ट किस प्रकार मारा गया, मुझ

को विस्तार से बताओ। देखिये—

महाभारत कर्ण पर्व अध्याय ६५, ६६, ६७,

आगे अर्जुन ने कहा कि—महाराज! कर्ण अभी नहीं मरा है। हम दोनों तो आपके कुशल समाचार जानने के लिए आये हैं। इस पर क्रुद्ध होकर युधिष्ठिर ने कहा कि तुम कर्ण को नहीं मार सकते हो, तो यह गाण्डीव धनुष श्रीकृष्णजी को दे दो।

यह सुनकर अर्जुन ने युधिष्ठिर महाराज का सिर काटने के लिए तलवार निकाल ली। श्रीकृष्णजी ने पूछा कि, अर्जुन यह क्या करते हो? अर्जुन ने कहा कि मेरी यह प्रतिज्ञा है, जब मुझको कोई यह कहे कि गाण्डीव धनुष दूसरे को दे दो, तो मैं उसका शिर काट दूंगा। अर्जुन बड़ी श्रद्धा से युधिष्ठिर महाराज से दर्शन करने आया था। युधिष्ठिर महाराज क्रोध में उसको बहुत कठिन बोल गये। परन्तु युधिष्ठिर को मारने से बड़ा अनर्थ हो जाता। इसलिए श्रीकृष्णजी ने अर्जुन को ऐसी विधि बताई कि जिससे अर्जुन की प्रतिज्ञा भी सर्वथा भंग न हो जाये, और युधिष्ठिर जी भी बच जायें, श्रीकृष्णजी ने कहा कि बड़े व्यक्ति का अपमान कर देना उसको मार देने के समान है। इसलिए हे अर्जुन तुम युधिष्ठिर महाराज के लिए अपमानजनक कुछ वाक्य बोल दो, जिससे इनका मरण-सा ही हो जाएगा। वहां श्रीकृष्णजी ने यह भी कहा है कि, राजनीति में आवश्यकता पड़ने पर झूठ बोल देना भी पाप नहीं होता है।

श्रीकृष्णजी के बहुत समझाने पर अर्जुन ने युधिष्ठिर महाराज के लिए कुछ अपमानजनक वाक्य बोले! उनमें ही यह वाक्य भी

है, "द्रौपदीतल्पस्थः' जिसमें द्रौपदी के साथ सोने वाला कहा गया है। अर्जुन ने जब इस प्रकार युधिष्ठिर का अपमान किया तब युधिष्ठिर पलंग से उठकर खड़े हो गये, और कहने लगे कि मैं बुरा हूं, इसलिए हे अर्जुन मैं वन को जाता हूं। मेरे पीछे भीमसेन महाराज हो जाएंगे, मैं वन में तपस्या करता हुआ जीवन-यापन करूंगा।

श्रीकृष्णजी ने युधिष्ठिर के चरण पकड़ लिये और अर्जुन द्वारा कहे हुए कठोर वचनों के कहे जाने का सारा विस्तारपूर्वक कारण बताया।

अर्जुन ने भी युधिष्ठिर जी से क्षमा माँगी—

ततो धनंजयो,
राजञ्छिरसा प्रणतस्तदा।
पादौ जग्राह पाणिभ्यां,
भ्रातुर्ज्येष्ठस्य मारिष ॥३२॥

महाभारत वन पर्व अध्याय – श्लोक ३२,

तब धनंजय ने मस्तक झुकाकर प्रणाम किया, और दोनों हाथों से बड़े भाई के पैर पकड़ लिए।

इस सारे वृत्त पर विचार करने से स्पष्ट है कि युधिष्ठिर महाराज को न अर्जुन ने कभी अनुजवधूगामी समझा न बताया।

हृदय को हिला देने वाले वाक्य जो श्रीसिद्धान्तीजी के लेख में धर्मराज युधिष्ठिर के लिए लिखे गये हैं। उनके लिए मैं अनुमान करता हूं, कि यह श्री सिद्धान्तीजी के अपने नहीं हैं, उस पक्ष के हैं जिसमें द्रोपदी को अर्जुन की स्त्री मानने का भाव उत्पन्न हो।

अर्जुन के जो वाक्य महाराज युधिष्ठिर के विरुद्ध है, उनमें एक भी शब्द ऐसा नहीं है, जिससे यह सिद्ध हो कि द्रौपदी अर्जुन की स्त्री है। कुछ वाक्य ये हैं, जिनके अंश उस लेख में दिये गये हैं।

यते हि नित्यं तव कर्त्तुमिष्टं,
दारैः सुतैर्जीवितेनात्मना च।
एवं यन्मां वाग्विशिखेनहंसि,
त्वत्तः सुखं न वयं विद्मकिंचित् ॥१३॥
मां मावमंस्था द्रौपदीतल्पसंस्थो,
महारथान् प्रतिहन्मि त्वदर्थे।
तेनातिशङ्की भारत निष्ठुरोऽसि,
त्वत्तः सुखं न भिजानामि किंचित् ॥१४॥

महाभारत कर्ण पर्व अध्याय ७० श्लोक १३, १४,

अर्थ—मैं सदा स्त्री, पुत्र, जीवन और इस शरीर को लगाकर तेरा प्रिय कार्य सिद्ध करने के लिए प्रयत्नशील रहता हूं। ऐसी दशा में भी तू मुझे अपने वाक्बाणों से मार रहा है। हम लोग तुझसे थोड़ा सा भी सुख न पा सके।

"तू द्रौपदी की शैया पर बैठा-बैठा मेरा अपमान न कर, मैं तेरे लिए ही बड़े-बड़े महारथियों का संहार कर रहा हूं। इसी से तू मेरे प्रति अधिक संदेह करके निष्ठुर हो गया है। तुझसे कुछ सुख मिला हो, यह मुझे स्मरण नहीं है"।

इन दोनों श्लोकों में तथा अन्यों में भी ऐसा कोई शब्द और वाक्य नहीं है। जिसका अर्थ यह निकले कि द्रौपदी अर्जुन की स्त्री है। अर्जुन की तीन स्त्रियां थी। एक उलूपी दूसरी चित्रांगदा और तीसरी सुभद्रा। उलूपी का पुत्र इरावान था, चित्रांगदा

का बभ्रुवाहन तथा सुभद्रा का अभिमन्यु था। अर्जुन ने युधिष्ठिर को यह कह दिया कि, मैं स्त्री, पुत्र, शरीर, मन सबके द्वारा तुम्हारे प्रिय कार्य में लगा रहता हूं। तो इसका यह अर्थ कहाँ हुआ कि द्रौपदी उसकी स्त्री है। और युधिष्ठिर को "द्रौपदी तल्पसंस्थ:" कह दिया तो इसका यह अर्थ कहां हो गया कि, युधिष्ठिर परायी स्त्री द्रौपदी से दुराचार करता है। भाव सीधा यह निकलता है कि अर्जुन ने युधिष्ठिर के कठोर वचन सुनकर क्रोध में भरे हुए यह वचन कहे कि, मैं युद्ध में परिश्रम कर रहा हूं। और आप अपनी पत्नी के पलंग पर पड़े हुए मुझको अपमानित कर रहे हो। यद्यपि युधिष्ठिर जी भी विलासी नहीं थे। घोर परिश्रम युद्ध में वह भी कर रहे थे। युद्ध से थककर ही आकर लेटे थे। क्रोध में कुछ अनुचित बातें कही ही जाती हैं। युधिष्ठिर की ओर से भी अर्जुन के लिए अधिक कठोर वचन कहे गये और अर्जुन की ओर से श्रीकृष्णजी की आज्ञा से ऐसे कठोर वचन कहे गये जिनसे युधिष्ठिर जी महाराज का अपमान हो जाये और यह समझ लिया जाये कि अर्जुन ने उनको एक प्रकार से मार दिया।

"द्रौपदी तल्पसंस्थ:" का अर्थ द्रौपदी के पलंग पर बैठा हुआ ही है। द्रौपदी से दुराचार करने वाला नहीं है।

पाण्डव जब द्रौपदी सहित हिमालय में जा रहे थे, तब सबसे पहले द्रौपदी गिरकर मर गयी, उस पर भीमसेन का प्रश्न है कि, हे महाराज युधिष्ठिर! द्रौपदी ही सबसे पहले मृत्यु को प्राप्त हुई है, इसका क्या कारण है?

युधिष्ठिर महाराज ने कहा—

पक्षपातो महानस्या,
विशेषेण धनंजये ।
तस्यतैत्फलमद्यै षा
भुङ्क्ते पुरुषसत्तम ॥६॥

महाभारत महाप्रस्थानिक पर्व अध्याय २ श्लोक ६,

युधिष्ठिर जी कहते हैं कि, द्रौपदी का अर्जुन के साथ, विशेष पक्षपात था, इसका फल भोग रही है।

श्री सिद्धान्तीजी का वाक्य इसके ऊपर यह है कि उसका (द्रौपदी का) विशेष स्नेह अर्जुन के साथ होना स्वाभाविक था, क्योंकि वह नियम से तो अर्जुन की ही स्त्री थी।

यहां विचारने योग्य वात यह है कि जब वह अर्जुन की ही स्त्री थी और अर्जुन के साथ में उसका स्नेह होना स्वाभाविक था तो फिर इसमें उसका क्या अपराध हुआ? अर्थात् कुछ भी नहीं, तो फल काहे का भोगा?

इसमें जो हेतु बताया गया वह सर्वथा मिथ्या सिद्ध हुआ। बात सीधी ये हैं कि यह श्लोक उनका डाला हुआ है, जो द्रौपदी के पांच पति मानते थे। उनका कहना ये है कि जब वह पांचों की पत्नी थी तो पाँचों के साथ उसका स्नेह बराबर होना चाहिये था इस दशा में अर्जुन के साथ विशेष प्रेम को पक्षपात और अपराध कहा जा सकता है। अर्जुन की स्त्री होने के पक्ष में इसका प्रयोग व्यर्थ है।

जब अर्जुन ही द्रोपदी का पति था तो उसका अन्यों की

अपेक्षा इससे शारीरिक और मानसिक विशेष सम्बन्ध और प्रेम होना ही चाहिये था। इसमें पाप क्या था? और जब पाप नहीं था, तो उसका कुफल भी वह क्यों भोगती?

[आर्य मर्यादा १६ सितम्बर सन् १९७१ ई०]

द्रौपदी अर्जुन की स्त्री थी, इस पक्ष में जो सबसे प्रबल प्रमाण दिया जाता है, वह श्री सिद्धान्ती जी के लेख में नहीं दिया गया है, उसे देखकर मैं उसका भी समाधान करता हूँ वह इस प्रकार बताया जाता है!

अर्जुन सुभद्रा को लेकर जब द्रौपदी के पास आये, तब द्रौपदी ने अर्जुन को फटकारा और उसने सुभद्रा को देखकर ईर्ष्या की, और कहा—

अभ्यर्च्य ब्राह्मणान् पार्थो,
द्रौपदीमभिजग्मिवान्।
तं द्रौपदी प्रत्युवाच,
प्रणयात् कुरुनन्दनम् ॥१६॥
तत्रैव गच्छ कौन्तेय,
यत्र सा सात्वतात्मजा।
सुबद्धस्यापि भारस्य,
पूर्वबन्धः श्थापते ॥१७॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय २२० श्लोक १६,१७,

"जो बारह वर्ष वनवास कहा जाता है अर्जुन उसे पूरा करके सुभद्रा को अपहरण करके जब लौटे तो उन्होंने धौम्य जी एवं माता कुन्ती को प्रणाम किया, तत्पश्चात् ब्राह्मणों का पूजन करते हुए वह द्रौपदी के समीप गये।

द्रौपदी ने प्रणयकोप वश कुरुनन्दन अर्जुन से कहा—कुन्ती कुमार ! यहां क्यों आये हो ! वहीं जाओ जहां वह सात्वत वंश की कन्या सुभद्रा है, सच है, वोझ को कितना ही कसकर वांधा गया हो, जव उसे दूसरी बार बांधते है तब पहला बन्धन ढ़ीला पड़ ही जाता है।

नोट—द्रौपदी के पांच पति मानने वाले इसका अर्थ यह निकालते हैं कि द्रोपदी ने सुभद्रा को देखकर अर्जुन पर क्रोध किया ये श्लोक भी उसी पक्ष के हैं, जिसमें द्रौपदी के पांच पति माने जाते हैं। वैसे अर्जुन का यह विवाह तीसरा था, इससे पहले उलूपी और चित्रागंदा के साथ अर्जुन के विवाह हो चुके थे। सुभद्रा के साथ विवाह करके एक वर्ष तक अर्जुन द्वारका में ही रहे, एक वर्ष के बाद आये हुए अर्जुन को द्रोपदी ने यदि हल्की सी फटकार दे भी दी तो क्या वह अनुचित थी। और क्रोध से नहीं उसमें "प्रणयात्" कहा है। अर्थात प्रेम से द्रौपदी ने कहा बहुत भार से गांठ शिथिल (हल्की) ढ़ीली पड़ जाती है, अर्थात सुभद्रा के साथ विवाह करने से तुम्हारा प्रेम उलूपी और चित्रागंदा से कम हो जावेगा। जो हित की बात होती है, उसे समझाने के अलग-अलग तरीके होते हैं। अगर बच्चा किसी गलत बात को कहता है तो, उसे पिटाई के साथ समझाना पड़ता है, अगर बरावर का अर्थात बड़ा हो गया हो तो उसे कुछ क्रोध व प्रेम से वही बात कही जाती है। ऐसा सोचकर द्रौपदी ने बड़ी भाभी के नाते अगर अर्जुन को उसके हित के लिए यह बात कही तो इसमें उसने क्या बुरा कहा ? और फिर इतना मात्र कहने से ही द्रौपदी को अर्जुन की पत्नी समझ

बैठता इससे ज्यादा अज्ञानता की और क्या बात हो सकती है महा-भारत में तो कमाल ही कर दिया आदि पर्व में जहां ये दोनों श्लोक अध्याय २२० में १६ व १७ का अर्थ दिया है, वहां नीचे कोष्टक में अपनी तरफ से लिख दिया जिसका मूल से कोई दूर का भी सम्बन्ध नहीं है कि—"यही हालत मेरे प्रति तुम्हारे प्रेम वन्धन की है" यह केवल जबंदस्ती द्रौपदी को अर्जुन की पत्नी बनाने का प्रयास नहीं है तो और क्या हैं ? में समझता हूँ मिलावट करने वाला चूक गया वरना उसने जो भावार्थ नीचे दिया है, वही ऊपर मूल (श्लोक) में परिवर्तन कर देता तो उसकी बात प्रामाणिक सिद्ध हो जाती।

में भी पहले द्रौपदी को अर्जुन की ही पत्नी मानता और जानता था, परन्तु ब्रह्मचारी अखिलानन्द जी झरिया वालों ने कहा कि द्रौपदी युधिष्ठिर की पत्नी थी, में इसके विषय में आपको प्रमाण एकत्रित करके भेजूगा। वह तो प्रमाण मेरे पास न भेज सके, परन्तु मैंने अपने पहले मत को अन्तिम न समझ कर विशेष खोज आरम्भ की, और मुझे जब ये सब बातें देखने को मिली तो मेरा दृढ़ निश्चय हो गया कि, द्रौपदी महाराजा युधिष्ठिर की ही पत्नी थी।

महान पण्डित श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ भी यही मानते थे कि, द्रौपदी युधिष्ठिर जी की ही पत्नी थी, अर्जुन की नहीं !

अर्जुन के साथ द्रौपदी का विवाह कहीं लिखा हुआ नहीं मिला। बिना विवाह के छोटी-छोटी बातों को खींचतान कर उनसे द्रौपदी को अर्जुन की स्त्री सिद्ध करने का प्रयास निराधार है।

महाभारत वन पर्व अध्याय २७ से ३२ तक में द्रौपदी ने

युधिष्ठिर को युद्ध के लिए उभारने के निमित्त बड़ा लम्बा व्याख्यान दिया है। जिससे यही भाव निकलता है कि, वह महारानी थी, और अपने पति को खुले हृदय से युद्ध करने की मन्त्रणा और प्रेरणा दे रही थी, छोटे भाई की पत्नी को ऐसा खुला परामंश और उपदेश देने का साहस नहीं हो सकता है। द्रौपदी का वह भाषण पढ़ने, मनन करने और शिक्षा ग्रहण करने योग्य है। वहां द्रौपदी का यह वचन विशेष ध्यान देने योग्य है—

द्रुपदस्य कुले जातां,
स्नुषां पाण्डोर्महात्मनः ॥३४॥
धृष्टद्युम्नस्य भगिनीं,
वीर पत्नीमनुव्रताम् ।
मां वै वनगतां द्रष्ट्वा,
कस्मात् क्षमसि पार्थिव ॥३५॥

महाभारत वन पर्व अध्याय २६ श्लोक ३४, ३५,

मुझ वीर पत्नी अपनी अनुव्रता को वन में गयी देखकर आप किस प्रकार दुष्टों को क्षमा कर रहे हो, स्पष्ट ही द्रौपदी ने अपने आप को युधिष्ठिर की पत्नी कहा है।

श्री कृष्ण जी को द्रोपदी का वचन—

लब्धाहमपि तत्रैव,
वसता सव्यसाचिना ।
तथा त्वया जिता कृष्ण,
रुक्मिणी भीष्मकात्मजा ॥११५॥
एवं सुयुद्धे पार्थेन,

जिताहं मधुसूदन ।
स्वयंवरे महत् कर्म,
कृत्वा न सुकरं परैः ॥११६॥

महाभारत वन पर्व अध्याय १२ श्लोक ११५, ११६,

अर्थ—श्री कृष्ण ! जैसे आपने भीष्मकनन्दिनी रूकमणी को जीता था उसी प्रकार मेरे पिता की राजधानी में रहते समय सव्यसाची अर्जुन ने मुझे जीता !

मधुसूदन ! स्वयम्वर में जो महान कर्म दूसरों के लिए दुष्कर था, वह करके भारी युद्ध में भी अर्जुग ने मुझे जीत लिया था ।

जो अर्थ इनका यहां निकाला गया है कि, जैसे रूक्मिणी श्री कृष्ण जी की पत्नी है, वैसे ही द्रौपदी कहती है, कि मैं, अर्जुन की पत्नी हूं, ऐसा अर्थ देने वाले यहां कोई शब्द नहीं है, यहां तो साम्य केवल जीतने में बताया है, पत्नी होने में नहीं ।

यदि में कहूं कि—जिस प्रकार से युद्ध में जीतकर पितामह भीष्म ने काशीराज की कन्याओं को प्राप्त किया था, उसी प्रकार श्री कृष्ण जी ने रुक्मिणी को प्राप्त किया, तो क्या उसका अर्थ यह होगा कि, रुक्मिणी जैसे श्री कृष्ण जी की पत्नी थी वैसे ही अम्बिका और अम्बालिका भी भीष्म जी की पत्नी थी । ऐसा अर्थ कोई नहीं मानेगा ।

अथवा उसका अर्थ यह हो सकेगा कि—जैसे भीष्मपितामह ने युद्ध में जीतकर प्राप्त की हुई, कन्याओं को विचित्र वीर्य को विवाह दिया था । ऐसे ही श्री कृष्ण जी ने रुक्मिणी को जीतकर किसी दूसरे को विवाह दिया ?

निश्चय है कि यह दोनों ही अर्थ इससे नहीं निकलेंगे । जिस

प्रकार समता केवल युद्ध जीतकर कन्या प्राप्त करने की है। अपनी पत्नी वनाने या न वनाने की नहीं, इसी प्रकार इस द्रौपदी के वचन में जीतने की समता है, पत्नी बनाने की नहीं। एक बात यहां और भी ध्यान देने की है—

द्रौपदी ने यहां "सुयुद्धे जिता" कहा है "स्वयम्बर जिता" नहीं कहा। यहां द्रौपदी का संकेत अर्जुन द्वारा किये गये लक्ष्य वेध की ओर नहीं है। उस युद्ध की ओर है, जो लक्ष्य वेध के पीछे द्रौपदी को बलात् छीन कर ले जाने की इच्छा वाले राजाओं के साथ अर्जुन और भीम ने किया था। जिसका वर्णन विस्तार से महाभारत आदि पर्व अध्याय १८८ व १८९ में है। वहां आप देख सकते हैं। वहां युद्ध श्री कृष्ण जी ने स्वयं देखा था। उस में एक ओर ब्राह्मण वेशधारी भीम और अर्जुन थे। और दूसरी ओर कर्ण और शल्य आदि। उस युद्ध को जीतकर भीम और अर्जुन ने द्रौपदी को प्राप्त किया था। और द्रौपदी के वचन में—"सुयुद्धे पार्थेन जिता" कहा गया है। पार्थ का अर्थ जो पृथा (कुन्ती) का पुत्र पार्थ हुआ तो पार्थ अर्जुन ही नहीं भीम भी है। इस युद्ध में विशेष भाग भीम का भी है। महाराज युधिष्ठिर ने एक ही स्थल पर कहा है, कि द्रौपदी को भीमसेन और अर्जुन दोनों ने जीता है, देखिये महाराजा द्रुपद को युधिष्ठिर जी का कहा गया वचन—

वयं हि क्षत्रिया राजन्,
पाण्डो पुत्रा महात्मनः।
ज्येष्ठं मां विद्धि कौन्तेयं,

भीमसेनार्जुनाविमौ ॥९॥

भ्राभ्यां तव सुता राजन्,
निर्जिता राजसंसदि ।

यमौ च तत्र कुन्ती च,
यत्र कृष्णा व्यवस्थिता ॥१०॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय १९४ श्लोक ९, १०,

महाराजा द्रुपद के द्वारा पाण्डवों का परिचय पूछे जाने पर युधिष्ठिर जी ने कहा—राजन् ! हम लोग महात्मा पाण्डु के पुत्र क्षत्रिय ही हैं। मुझे कुन्ती का बड़ा पुत्र समझिये तथा अर्जुन व भीमसेन है, इन्हीं दोनों ने बहुत से राजाओं के समूह में आपकी पुत्री द्रौपदी को जीता है तथा वे नकुल व सहदेव हैं। एवं माता कुन्ती राजकुमारी कृष्णा के पास हैं।

७—महाभारत के महाप्रथान पर्व में, पाण्डवों के महाप्रस्थान (हिमालय में मरने (गलने) के लिए जा रहे थे) के समीप युधिष्ठिर के द्वारा द्रौपदी के प्रति पक्षपात करने की अयुक्तियुक्त हेत्वाभास पूर्ण बात कहलवाई गयी है जो अभी छठे संदर्भ में पाठकों ने पढ़ी। महाप्रस्थानिक पर्व में पर्व में है कि—युधिष्ठिर ने इन्द्र से कहा—

तैर्विना नोत्सहे वस्तुमिह,
दैत्यनिबर्हण: ।

गन्तु मिच्छामि तत्राहं,
यत्र ते भ्रातरो गता: ॥३७॥

यत्र सा बृहती श्यामा,
बुद्धि सत्त्व गुणान्विता ।

द्रौपदी योषितां श्रेष्ठा,
यत्र चैव गता मम ॥३८॥

महाभारत महाप्रस्थानिक पर्व अध्याय ३ श्लोक ३७, ३८,

हे शत्रु सूदन ! अपने भाइयों के विना मेरा यहां रहने का उत्साह नहीं है । मैं वहीं जाना चाहता हूँ । जहां मेरे भाई गये हैं । जहां वह बड़ी-बड़ी आंखों वाली बुद्धिमती सत्त्वगुणयुक्ता स्त्रियों में श्रेष्ठ मेरी श्यामा द्रौपदी गयी है, वहां ही में जाना चाहता हूँ यहां द्रौपदी को मेरी द्रौपदी कहा है ।

किसी प्रमाण से भी द्रौपदी अर्जुन की स्त्री सिद्ध नहीं होती है । द्रौपदी को अर्जुन की स्त्री मानने पर बड़े-बड़े प्रबल प्रश्न उठते हैं ।

१. युधिष्ठिर ने जूए में अपनी पत्नी को न लगाकर अर्जुन की पत्नी को क्यों लगाया ?

२. बारह वर्ष वनवास में और एक वर्ष अज्ञात वास में युधिष्ठिर ने अपनी पत्नी को साथ न रखकर अर्जुन की पत्नी को क्यों रक्खा ?

३. यदि युधिष्ठिर को अनुजवधूगामी, द्रौपदी को दुराचारिणी और अर्जुन को दुराचारी, जो दुराचार के लिए अपनी पत्नी देता है, (दुराचार का दलाल) बनाकर ही द्रौपदी अर्जुन की स्त्री सिद्ध हो सकती है, तो इससे द्रौपदी को किसी की भी पत्नी न मानना अच्छा है । मेरे विचार में ये तीनों सदाचारी और निष्पाप ठहरते हैं । एवं सर्व प्रकार से विचार करके, अनेकों प्रमाणों को देखते हुए सिद्ध होता है कि द्रौपदी अर्जुन की नहीं युधिष्ठिर की ही पत्नी थी ।

अगर द्रौपदी को अर्जुन की या पांचों पाण्डवों की स्त्री मान लियाजाय तो ?

यह विचारणीय विषय है, अगर आप महाभारत के प्रक्षिप्त भागों को लेकर द्रौपदी को अर्जुन की पत्नी घोषित कर देते हैं, तो प्रथम तो इतिहास का नाश हो जावेगा, जो बात अंग्रेज करना चाहते थे, उसी को जो रही सही है, आप पूरा कर दोगे।

दूसरे जब हमारे इतिहास में ऐसी बातें सिद्ध हो जावेगीं तो आजकल की सन्तान इन्हीं धर्म ग्रन्थों का हवाला दे-देकर उलटे रास्ते पर चलना आरम्भ कर देगी। और कुछ तो चल भी रहे हैं। अगर उनसे बात करो तो वह इतिहास और धर्म शास्त्रों का हवाला तथा पुराण आदि ग्रन्थों की गवाही देते हैं, तो यह धर्म शात्र न रहकर अधर्म शास्त्र हो जायेंगे, ।

जसे अगर आप कोई भी पाप-दुराचार, करना चाहें तो आपको पुराणों में से सभी कुकृत्यों के लिए गवाही मिल जायेगी, तो ये धर्मशास्त्र तो धर्म के नाम पर कलंक है।

अतः इन धर्मशास्त्रो को धर्मशास्त्र ही रहने देना चाहिए और इनके विषयों को तोड़-मरोड कर किसी बात को उल्टी-सीधी सिद्ध न करके जो बात सर्व शास्त्रों एवं वेदों से सम्मत हो उसे ही जानना एवं मानना चाहिये, "बड़े भाई के अविवाहित

होते हुए छोटे भाई ने विवाह नहीं किया" क्योंकि वह जानता था कि यह अधर्म है, और उसने कहा भी है। और फिर आप सारे महाभारत को पढ़ जाइये। कहीं पर भी केवल अर्जुन का विवाह लिखा नहीं मिलेगा विधिपूर्वक पूरा विवाह संस्कार युधिष्ठिर जी के साथ हुआ, इस प्रकार से सर्व प्रमाणों से यह सिद्ध हुआ कि द्रौपदी का एक ही पति था और वह युधिष्ठिर ही था। इतना कह कर ही में इस विषय को यहीं समाप्त करता हूँ

और विश्वास करता हूँ मेरे इन प्रमाणों एवं मेरी बात पर पाठक गण बुद्धि से विचार करेंगे, तथा इसे मान्यता देगें, इसी में देश, धर्म, और हर व्यक्ति का कल्याण है।

॥ इतिशम् ॥

सूचना

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग के अन्तर्गत

अमर वृत

जनवरी सन् १९७९ ई० में मासिक पत्र निकल रहा है।

जिसके सम्पादक, प्रवन्ध सम्पादक एवं सह सम्पादक तथा विज्ञापन प्रवन्ध निम्न होंगे।

सम्पादक : अमर स्वामी जी महाराज
प्रवन्ध सम्पादक : लाजपत राय आर्य
विज्ञापन प्रवन्धक : हरि प्रकाश "हरि"
सह सम्पादक : १. डा० योगेन्द्र कुमार शास्त्री, एम० ए० पी० एच० डी० जम्मू
२. डा० शिव पूजन सिंह कुशवाहा—कानपुर
३. रविकान्त शास्त्री, एम० ए०—शाहजहांपुर—उ०प्र०
४. आचार्य सोमव्रत शास्त्री—गाजियाबाद
५. डा० जंगबहादुर शास्त्री—गाजियाबाद